Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

भारतीय सहकारिता आन्दोलन ।

Rajeev

शंकरसहाय सकसेना ।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

Bhartiya Sah Kari andolan.

भारतीय सहकारिता आन्दोलन ।

~~Bhari Vibhatiyan~~

Sri Pratap Singh
Library
Srinagar.

Shankar saxena S-S

लेखक

शंकरसहाय सकसेना,

एम.ए.,(इकान.)एम.ए.,(काम.)बी.काम.

अर्थशास्त्र प्रोफ़ेसर, बरेली कालेज, बरेली ।

SPS
303.6 S 32 B
13489

प्रथम संस्करण]   १९३५   [मूल्य २) रुपया

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

प्रकाशक—

एस. एस. सकसेना,

बरेली कालेज, बरेली ।

acc: no: 13489

Rs 2-0-0

मिलने का पता—

व्यवस्थापक–भारतीय ग्रन्थमाला, वृन्दावन ।
तथा–प्रोफ़ेसर शंकरसहाय सकसेना,
बरेली कालेज, बरेली, यू० पी० ।

Sri Pratap Sin
Library
Srinagar

मुद्रक—

त्रिभुवननाथ शर्मा,

जमुना प्रिन्टिंग वर्क्स, मथुरा ।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

समर्पण ।

श्रीमन् पंडित शंकरप्रसाद भार्गव एम. ए., एल-एल. बी., प्रिंसिपल, राजऋषी कालेज, अलवर तथा भूतपूर्व प्रिंसिपल, सनातनधर्म कालेज, कानपुर।

गुरुदेव,

जिस वस्तु को आपके चरणों में बैठकर प्राप्त किया है वही भेंट करने चला हूँ ; यह धृष्टता समझी जा सकती है, किन्तु मैं तो इस पुस्तक को परीक्षा रूप में लेकर उपस्थित हुआ हूँ । आशा है कि आप इसे स्वीकार कर मुझे कृतार्थ करेंगे ।

शंकर

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

निवेदन ।

"भारतीय सहकारिता आन्दोलन" पर यह पुस्तक लेकर पाठकों के सामने उपस्थित होते हुए हृदय को अत्यन्त हर्ष हो रहा है। सम्भवतः मैं इस विषय पर पुस्तक लिखने का प्रयास भी न करता यदि श्रीयुत भगवानदासजी केला मुझे पुस्तक लिखने पर बाधित न कर देते। श्री केलाजी साहित्यिक तपस्वी हैं, भारतीय ग्रन्थमाला के द्वारा अर्थशास्त्र तथा राजनीति साहित्य उत्पन्न करके उन्होंने हिन्दी की महान सेवा की है। कोई भी उनके सम्पर्क में आकर मातृ भाषा को पुष्पांजलि चढ़ाये बिना नहीं रह सकता। यही मेरे साथ हुआ, केलाजो को हिन्दी में 'सहकारिता' पर एक भो पुस्तक का न होना खटक रहा था। स्वयं अन्य पुस्तकों के लिखने में व्यस्त होने के कारण उन्होंने मुझे पकड़ा। इस विषय में रुचि होने के कारण मैंने पुस्तक लिखने का बचन दे दिया।

एक वर्ष परिश्रम करके गत वर्ष पुस्तक तैयार करली थी किन्तु मेरे यहां चोरी होगई और हस्त लिखित पुस्तक भी हाथ से निकल गई। बचन बध्य हो चुका था, अस्तु, फिर एक वर्ष परिश्रम करके पुस्तक लिखी।

सहकारिता आन्दोलन के बिना भारतवर्ष के ग्रामों का उद्धार नहीं हो सकता। आयरलैंड, डैनमार्क, जर्मनी, तथा इटली में तो इस आन्दोलन की बदौलत किसानों की काया पलट होगई। भारतवर्ष में जहां किसानों के जीवन मरण का प्रश्न उपस्थित है,

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बिना इस आन्दोलन के गति ही नहीं है। अंग्रेज़ी में इस विषय पर हज़ारों सुन्दर ग्रन्थों की रचना हो चुकी है, किन्तु उन पुस्तकों से अंग्रेज़ी न पढ़े हुए देश वासी कोई लाभ नहीं उठा सकते। हिन्दी भाषा भाषी इस आन्दोलन की अद्भुत राष्ट्र निर्माण की शक्ति को जान सकें, इसी उद्देश्य से यह पुस्तक लिखी गई है।

अन्त में मैं संयुक्त प्रन्तीय सहकारिता विभाग के रजिस्ट्रार श्री विष्णु सहायजी आई. सी. एस. के प्रति हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करना चाहता हूँ। उन्होंने समय निकाल कर सारी पुस्तक को पढ़ा और इस विषय के अपने अनुभव का मुझे पूरा लाभ दिया है। उनके सौजन्य तथा सहानुभूति का मूल्य मैं धन्यवाद देकर आंकने की धृष्टता नहीं करूँगा।

मुझे आशा है कि भारतीय निर्धन जनता और विशेषतः ग्राम निवासियों से सम्बन्ध रखने वाले सरकारी विभाग तथा ग़ैर-सरकारी संस्थाऐं इस पुस्तक का यथेष्ट स्वागत करेंगी।

विनीत

बरेली कालेज। शंकरसहाय सकसेना।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सहायक पुस्तकें ।

1. Co-operation in many lands *by* L. S. Smith Gordon. and C. O'Brien. Vols. I and II.
2. Co-operation in Bombay *Edited by* Prof. H. L. Kaji
3. Co-operation in India *by* Henry W. Walff.
4. Peoples Bank ,, ,,
5. Co-operative Banking ,, ,,
6. Co-operative movement in India *by* Dr. Eleanor M. Hough Ph. D.
7. Rusticus Loquitur *by* M. L. Darling
8. Co-operative Movement in India *by* P. Mukherji M.A.
9. Co-operation in India and Abroad *by* Talmaki.
10. Rural Reconstruction in Ireland *by* Linel Smith Gordon.
11. Reconstruction and Education in Rural India *by* Dr. Prem Chand Lal Ph. D.
12. Up From Poverty *by* Dr. D. Spencer Hatch
13. Remaking of an Indian Village *by* F. L Brayne.
14. Agricultural Co-operation in India *by* John Matthai D. Sc.
15. Indian Year Book 1934.
16. Co-operation in India *by* H. L. Kajl.
17. Co-operation in Agriculture *by* H. W. Walff.
18. Co-operative Movement in Indi a *by* J. L. Raina.
19. Report of the Central Banking Enquiry Committee.
20. Report of the Royal Agriculture Commission.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

21. Report of the U. P. Banking Enquiry Committee.
22. Report of the Maclagan Committee on Co-operation.
23. Report of the Co-operative Committee of U. P.
24. Annual Reports of the working of Co-operative Departments in Different Provinces.
26. Reports of the Banking Enquiry Committees of the Different Provinces.
26 Review of Rural Welfare Activities in India *bg* C. F. Stickland C. I. E.
27. The Law and Principles of Co-operation *by* H. Calvert.
28. Co-operation in Germany and Italy *by* M.L. Darling.
29. Introduction to Co-operation in India *by* C. F. Stickland.
30. Studies in European Co-operation, Vols. I and II *by* C. F. Stickland.
३१. अर्थशास्त्र शब्दावली—भारतीय ग्रन्थमला, वृन्दाबन।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

विषय सूची

परिच्छेद.	विषय.	पृष्ठ.
१	सहकारिता के सिद्धान्त	१
२	भिन्न भिन्न प्रकार की सहकारी समितियां	१६
३	भारतीय ग्रामीण ऋण समस्या	४३
४	सहकारिता आन्दोलन का श्रीगणेश तथा सहकारिता सम्बन्धी क़ानून	६६
५	कृषि सहकारी साख समितियां	८६
६	नगर सहकारी साख समितियां	१०७
७	सैन्ट्रल बैंक तथा बैंकिंग यूनियन	११६
८	प्रान्तीय बैंक	१३१
९	सहकारी भूमि बन्धक बैंक	१४७
१०	मितव्ययिता बढ़ाने वाली समितियां	१६६
११	दूध सहकारी समितियां	१७३
१२	भूमि की चकबन्दी करने वाली समितियां	१८३
१३	सफ़ाई तथा स्वास्थ्य रक्षक समितियां	१९४
१४	विक्रय तथा कृषि सम्बन्धी सहकारी समितियां	२०९
१५	सहकारी श्रमजीवी तथा कृषि समितियां	२२०
१६	कृषि से सम्बन्धित अन्य समितियां	२३१

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

१७	उत्पादक सहकारी समितियां	२४०
१८	उपभोक्ता स्टोर्स तथा गृह-निर्माण समितियां	२५१
१९	सहकारी शिक्षा, निरीक्षण, तथा प्रचार	२६७
२०	ग्राम सुधार और सहकारिता	२८१
२१	उपसंहार	२९७
....	शब्दावली	३१०

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

भारतीय सहकारिता आन्दोलन

प्रथम परिच्छेद

सहकारिता के सिद्धान्त

समाज में रह कर मनुष्य बिना एक दूसरे के साथ सहयोग किये, एक दिन भी अपना काम नहीं चला सकता। सभ्यता के प्रारम्भिक काल में भी मनुष्य-समाज सहकारिता के सिद्धान्तों को समझती थी और व्यवहारिक जीवन में उसका उपयोग भी करती थी। यदि मनुष्य-समाज सहकारिता को न अपनाती तो मनुष्य-जाति आज इतनी उन्नत तथा सभ्य कदापि न होती। आज से हज़ारों वर्ष पहले ही अनुभव से यह ज्ञात होगया था कि मनुष्य-जीवन, बिना एक दूसरे के साथ सहयोग किये, असम्भव हो जायगा।

आज कल प्रतिस्पर्धा का युग है; साधारणतया यह समझा जाता है कि जो प्रतिस्पर्धा में नहीं ठहर सकता उसके लिये संसार में कोई स्थान नहीं है, इस कारण लोगों की यह धारणा बन गई है कि मनुष्य जीवन का मूल मन्त्र प्रतिस्पर्धा है; किन्तु देखने से ज्ञात होता है कि मनुष्य जीवन का मूल मन्त्र सहकारिता है, न कि प्रतिस्पर्धा। यदि देखा जावे तो मनुष्य एक दूसरे पर अपनी साधारण आवश्यकताओं के लिये इतना निर्भर है कि

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

यदि एक दिन के लिये भी उसको दूसरों का सहयोग न मिले तो उसका जीवन ही कण्टकमय हो जावे।

समाज में प्रत्येक मनुष्य की कार्य-शक्ति एकसी नहीं है। अस्तु, सहकारिता तथा श्रम-विभाग (Division of labour) के बिना मनुष्य समाज में रह कर अपनी आवश्यकतायें पूरी नहीं कर सकता। मनुष्य-समाज की उन्नति तथा सभ्यता के विकास के लिये यह अत्यन्त आवश्यक है कि पूर्ण श्रम-विभाग का सिद्धान्त काम में लाया जावे। यदि अधिक क्षमता वाले मनुष्य ऐसे साधारण कार्यों में अपनी शक्ति का दुरुपयोग करें, जिनको साधारण क्षमता वाले मनुष्य भी कर सकते हैं, तो समाज तथा मनुष्य की व्यक्तिगत उन्नति में भारी बाधा पड़ेगी। मनुष्य-जाति तभी उन्नति कर सकती है, जब मनुष्य को अपनी कार्य-शक्ति के अनुसार किसी एक कार्य में विशेष योग्यता प्राप्त करने का अवसर दिया जावे। उदाहरण के लिये, किसी भी वस्तु के तैयार कराने में हमें सैकड़ों मनुष्यों का सहयोग प्राप्त करना पड़ता है। मध्य प्रान्त अथवा बम्बई प्रान्त का किसान कपास उत्पन्न करता है। कपास उत्पन्न करने में उसे स्वयं बहुत से मनुष्यों का सहयोग प्राप्त करने की आवश्यकता पड़ती है। महाजन, ज़मींदार, बढ़ई, लुहार, तथा मज़दूर सभी उसे कपास उत्पन्न करने में सहायता देते हैं। दलाल, आढ़तिया, तथा व्यापारी उस कपास को मोल लेकर अथवा व्यवसायियों के लिये ख़रीद कर जिनिंग फ़ैक्टरी में ले जाते हैं। जिनिंग फ़ैक्टरियों में सैकड़ों

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मज़दूरों के द्वारा कपास ओटी जाती है, और गांठों में बांध कर अहमदाबाद, बम्बई, अथवा जापान के औद्योगिक केन्द्रों को भेज दी जाती है। इस कार्य में भी बैलगाड़ी, मोटर, रेल, और जहाज़ों पर कार्य करने वाले, तथा व्यापारियों का सहयोग होता है। इसके उपरान्त कारख़ानों में हज़ारों मज़दूरों, मिस्त्रियों, तथा अन्य कार्य-कर्ताओं की सहायता से कपड़ा तैयार किया जाता है। अन्त में वह कपड़ा रेलों, जहाज़ों, तथा बैलगाड़ियों और मोटरों के द्वारा दूकानदारों के पास आता है। ग्राहक उसको ख़रीद कर दर्ज़ी से कोट, कमीज़ इत्यादि बनवाता है, तब कहीं वह वस्त्र पहिन सकता है। जब तक इतने लोग एक दूसरे के साथ सहयोग नहीं करेंगे, वस्त्र तैयार नहीं हो सकते। इसी प्रकार, किसान गांवों में रह कर गेंहूँ तथा अन्य अनाज उत्पन्न करता है, और नगरों में निवास करने वाले अध्यापक, क्लर्क, डाक्टर, वकील तथा दूसरे लोग उस गेंहूँ को खाते हैं। गेंहूँ उत्पन्न करने में तथा उसे शहरों तक लाने में सैकड़ों मनुष्यों की सहायता की आवश्यकता होती है। कोई भी काम क्यों न ले लिया जावे, बिना सहयोग के वह सरलता-पूर्वक नहीं हो सकता। आज हम लोगों का जीवन एक दूसरे के सहयोग पर इतना अधिक निर्भर है कि यदि सहकारिता के सिद्धान्त को त्याग दिया जावे तो यह ध्यान में भी नहीं आ सकता कि संसार का कार्य कैसे चल सकेगा। मनुष्य की शक्ति सहकारिता में छिपी हुई है, और सहकारिता के द्वारा ही उसकी उन्नति हो सकती है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मनुष्य जाति अब सहकारिता के सिद्धान्त को भली भांति समझ गई है, और इसको मनुष्य-जीवन के लिये आवश्यक समझती है। समाज में निर्बल और सबल, बुद्धिमान और मन्द-बुद्धि, साहसी और कायर, चतुर और मूर्ख, शीघ्र कार्य करने वाले तथा आलसी—सभी प्रकार के मनुष्य हैं, यदि समाज को उन्नति की ओर अग्रसर होना है तो इन सब को एक साथ कार्य करना होगा। यदि समाज प्रतिस्पर्धा के सिद्धान्त को अपनाले तो समाज की उन्नति अवश्य ही रुक जावेगी। कुछ लोगों का कहना है कि मनुष्य जीवन एक भयंकर संग्राम है और इस संग्राम में वही जीवित रहकर सफल हो सकता है, जो संग्राम में ठहर सके। जो निर्बल हैं—जो जीवन-संग्राम में ठहर नहीं सकते, उनके लिये यहां कोई स्थान नहीं है। उनका कहना है कि यदि इस संग्राम में सबलों को निर्बलों की सहायता के लिये जाना पड़ा तो उनकी व्यक्तिगत उन्नति में बाधा पड़ेगी; व्यक्तिगत उन्नति तथा यशोपार्जन के लिये सहकारिता नहीं, प्रतिस्पर्धा की आवश्यकता है, सहकारिता इसके लिए घातक सिद्ध होगी। सहकारितावादी शक्तातिजीवन (Survival of the fittest) के सिद्धान्त को स्वीकार नहीं करते। यह सिद्धान्त मनुष्य को समाज के ऊपर बिठा देता है, व्यक्तिगत इच्छाओं की पूर्ति के लिये सामूहिक स्वार्थ को ठुकराकर अपने पथ पर अग्रसर होना ही इस सिद्धान्त के मानने वालों का उद्देश्य होता है। यह सिद्धान्त व्यक्तिगत लाभ के लिए सामूहिक लाभ को नष्ट करने की शिक्षा

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

देता है और समाज में घोर असमानता उत्पन्न करता है। आधुनिक युग में पूँजीपतियों और श्रमजीवियों में जो भयंकर संग्राम छिड़ा हुआ है, "पूँजी पतियों को नष्ट करदो" की जो आवाज़ चारों ओर से सुनाई देरही है, वह इस सिद्धान्त के द्वारा उत्पन्न हुई आर्थिक असमानता के कारण ही उठाई गई है।

समाज अपने निर्बल सदस्यों को ठीक उसी प्रकार नष्ट होते नहीं देख सकती, जिस प्रकार माता पिता अपने लंगड़े अथवा लूले पुत्र को मरते नहीं देख सकते। समाज का मूल मन्त्र शक्तातिजीवन न होकर "निर्वलों की रक्षा" होना चाहिये। यदि हम चाहते हैं कि समाज में उत्पन्न हुई घोर आर्थिक विषमता के कारण, हमें भयंकर क्रांतियों का सामना न करना पड़े तो हमें सहकारिता को अपनाना होगा। सहकारिता निर्बलों की रक्षा करती है, वह उनको निर्बल नहीं रहने देती, वरन् उनको संगठित करके शक्तिवान बनाने का प्रयत्न करती है। सहकारिता आन्दोलन उन लोगों की उन्नति में वाधक नहीं होता जो कि शक्तिवान हैं और प्रतिस्पर्धा में अपने पैरों पर स्वयं खड़े हो सकते हैं; सहकारिता का ऐसे लोगों से कोई सम्बन्ध नहीं है। वह तो केवल निर्धन तथा निर्बलों का आन्दोलन है; पारस्परिक सहायता और सहानुभूति इसके मुख्य सिद्धान्त हैं, और सेवा इसका लक्ष्य है।

यह तो पूर्व ही कहा जा चुका है कि मनुष्य का कोई भी कार्य बिना दूसरों के सहयोग के नहीं हो सकता, किन्तु आधुनिक

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

औद्योगिक संगठन में धन-वितरण की प्रणाली इतनी दूषित है कि जो लोग उत्पादन कार्य में सहयोग देते हैं, उन्हें उचित हिस्सा नहीं मिलता, अर्थात् कुछ लोग तो उचित से अधिक पा जाते हैं, और अधिक संख्या वालों को, जो कि निर्बल हैं, अपना हिस्सा भी नहीं मिलता। मिल में काम करने वाला मज़दूर जो मिल को सफलता-पूर्वक चलाने के लिये उतना ही आवश्यक है जितना कि पूँजीपति अथवा मिल-मैनेजर, बहुत थोड़ी मज़दूरी पाता है; तथा मैनेजर और पूँजीपति अनुचित रूप से सम्पत्ति का अधिक भाग हड़प कर जाते हैं,। किसान गेंहूँ उत्पन्न करता है, दलाल, थोक व्यापारी, तथा दूकानदार साधारण गृहस्थ को गेंहूँ पहुँचाने में सहयोग करते हैं; किन्तु गेहूँ का जो मूल्य ग्राहक देता है उसका बहुत थोड़ा अंश किसान को मिलता है, और दलाल, थोक व्यापारी, तथा दूकानदार उसका अधिक अंश खा जाते हैं। किसान को खेत की पैदावार का इतना कम मूल्य मिलता है कि खेती का ख़र्चा निकालने पर उसके लिये बहुत कम बचता है; यह उसके परिश्रम को देखते हुये कुछ भी नहीं होता। रेलवे लाइन को डालने का बड़े बड़े ठेकेदार ठेका लेते हैं, हज़ारों मज़दूरों तथा कारीगरों को रख कर वे काम करते हैं, काम करने वाले मज़दूरों और कारीगरों को बहुत थोड़ी मज़दूरी देकर ठेकेदार सारा लाभ डकार जाता है। सहकारिता धन-वितरण की अन्याय-पूर्ण प्रणाली को स्वीकार नहीं करती और इसको नष्ट कर देना चाहती है। सहकारिता आन्दोलन वर्तमान दूषित प्रणाली का

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

विरोध करता है और प्रत्येक मनुष्य को, जिसने सम्पत्ति के उत्पादन कार्य में सहयोग दिया है, उसके परिश्रम के अनुपात में सम्पत्ति देने का समर्थन करता है।

सम्पत्ति का उत्पादन केवल पूँजी के ही द्वारा नहीं होता; श्रम की भी आवश्यकता होती है। पूँजीपति को अपनी पूँजी पर सूद तो मिलना ही चाहिये; साथ ही वह जोखिम भी उठाता है, उसके लिये भी उसे कुछ लाभ मिलना चाहिये। बेचारे मज़दूर को तो पूरी मज़दूरी भी पूँजीपति नहीं देते; अस्तु, यह सब तथा अन्य ख़र्चे निकाल कर भी कुछ अतिरिक्त लाभ बचता है। प्रश्न होता है कि यह अतिरिक्त लाभ किसको दिया जावे ? आधुनिक औद्योगिक संगठन में तो यह सारा का सारा पूँजीपतियों को मिलता है। श्रमजीवी समुदाय इस कारण क्षुब्ध हो उठा है। जब मज़दूर लोग देखते हैं कि उन्हें कठिन परिश्रम करने पर भी भर-पेट भोजन नहीं मिलता, और पूँजीपति अनन्त धन-राशि प्रति वर्ष हड़प जाते हैं तो स्वभावतः वे लोग असन्तुष्ट हो जाते हैं। क्रमशः औद्योगिक देशों में श्रमजीवी समुदाय आज सङ्गठित हो गया है और इस अत्याचार को सहन नहीं करना चाहता। ट्रेड यूनियन आन्दोलन इसी प्रयत्न का फल है। साम्यवाद तो पूँजीपतियों के अस्तित्व को ही नष्ट कर देना चाहता है। श्रमजीवी आन्दोलन तथा साम्यवाद लाभ को केवल मज़दूरों के ही लिए सुरक्षित रखना चाहते हैं। सहकारिता अतिरिक्त लाभ का न्यायपूर्ण विभाजन करना चाहता है और

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

किसी एक वर्ग को दूसरे वर्ग पर अत्याचार नहीं करने देता।

सहकारिता आन्दोलन एक आर्थिक आन्दोलन है । आज आर्थिक संगठन इस प्रकार का बनगया है कि पूँजीपति श्रमजीवी वर्ग का शोषण कर रहे हैं। फल-स्वरूप श्रमजीवी समुदाय पूँजीपतियों के अस्तित्व को नष्ट करदेना चाहता है। दोनों वर्गों में भयंकर युद्ध छिड़ा हुआ है; दोनों एक दूसरे को दबाने का प्रयत्न कर रहे हैं। सहकारिता आन्दोलन एक ऐसी समाज का निर्माण करना चाहता है जिसमें इस प्रकार युद्ध न होगा, जहां भिन्न भिन्न वर्ग एक दूसरे का साथ देंगे, और आर्थिक विषमता का यह भयंकर रूप नष्ट हो जायगा। जब समाज के निर्बल सदस्य किसी भी आर्थिक कार्य अर्थात् उत्पत्ति, उपभोग, विनिमय, तथा वितरण में सम्मिलित प्रयत्न से उत्पन्न हुए लाभ को आपस में न्यायपूर्ण प्रणाली से बांट लें तो ऐसे सङ्गठन को सहकारी समिति कहेंगे। कुछ लोग सहकारी समितियों की तुलना ट्रेड यूनियन से करते हैं, किन्तु सहकारी समितियां इससे भिन्न हैं। ट्रेड यूनियन आधुनिक आर्थिक संगठन को स्वीकार करती है और केवल श्रमजीवी समुदाय की आर्थिक स्थिति को सुधारना चाहती है; यदि पूँजीपति मज़दूरों की मांग को स्वीकार नहीं करते हैं तो ट्रेड यूनियन हड़तालों के द्वारा उनको विवश कर देती है। सहकारी समितियों के कार्य का ढंग दूसरा ही है, ट्रेड यूनियन विघातक कार्य करती हैं, और सहकारी समितिया रचनात्मक कार्य करती हैं।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

प्रत्येक आर्थिक हलचल में सहकारिता के सिद्धान्तों का उपयोग किया जा सकता है। सहकारिता के सिद्धान्त को पूर्णतया समझने के लिये यह आवश्यक है कि हम सहकारी समितियों तथा आधुनिक औद्योगिक संस्थाओं का भेद समझ लें। मानलो कि कुछ मोची अपनी आर्थिक स्थिति को सुधारने की दृष्टि से, अपनी थोड़ी थोड़ी पूँजी को लेकर एक सङ्गठन में सम्मिलित होते हैं और निश्चय करते हैं कि वे सम्मिलित रूप में जूते का व्यवसाय करेंगे, समिति के कार्य का संचालन करने में प्रत्येक सदस्य का समान अधिकार होगा, और वार्षिक लाभ सदस्यों की पूँजी के अनुपात में न बांटा जाकर, सदस्यों की जूतों की उत्पत्ति के अनुपात में बांटा जावेगा, तो ऐसी समिति को सहकारी उत्पादक समिति कहेंगे। सहकारी उत्पादक समितियों तथा मिश्रित पूँजी वाली कम्पनियों में यही भेद है कि एक तो मनुष्यों का संघ है और दूसरा पूँजी का संघ है। मिश्रित पूँजी वाली कम्पनियों में कार्य संचालन का अधिकार तथा लाभ, हिस्सेदारों को पूँजी के अनुपात में ही मिलता है। उत्पादक सहकारी समतियों के संगठन में मज़दूर पूँजी को किराये पर लेकर धन्धे की जोखिम उठाते हैं,किंतु पूँजी वाली कम्पनियों में हिस्सेदार स्वयं कार्य नहीं करते, वे मज़दूरों को नौकर रखते हैं और धन्धे की जोखिम उठाते हैं। उत्पादक सहकारी समितियां पूँजी के लिये उचित सूद दे देती हैं और लाभ आपस में बांट लेती हैं। किन्तु मिश्रित पूँजी वाली कम्पनियों में निश्चित मज़दूरी देकर

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मजदूर रखे जाते हैं और लाभ हिस्सेदारों में पूँजी के अनुपात में बांट दिया जाता है। सहकारी समितियों में पूँजी को अधिक महत्व नहीं दिया जाता। उसको सम्पत्ति उत्पन्न करने के लिये एक साधन मात्र समझा जाता है। यही कारण है कि समिति के प्रत्येक सदस्य को केवल एक 'वोट' मिलती है, उसको समिति के कार्य सञ्चालन में उतना ही अधिकार होता है जितना कि किसी दूसरे सदस्य को; परन्तु मिश्रित पूँजी वाली कम्पनियों में पूँजी का ही सर्वोच्च स्थान होता है, धन्धे का लाभ तथा कार्य-सञ्चालन-अधिकार हिस्सेदारों में पूँजी के अनुपात में दिया जाता है।

इन दोनों में एक भेद और भी है जो अत्यन्त महत्वपूर्ण है। मिश्रित पूँजी वाली कम्पनियों की सफलता, अन्य कम्पनियों की प्रतिद्वन्दता में सफलता पूर्वक खड़े रहने पर निर्भर है। प्रत्येक कंपनी का अपना एक व्यक्तित्व होता है, और प्रत्येक कंपनी दूसरी कंपनियों को कुचल कर आगे बढ़ने का प्रयत्न करती है। सहकारिता आन्दोलन इस व्यक्तिवाद के सिद्धान्त को नहीं मानता। सहकारी समितियां एक दूसरे की प्रतिद्वन्दता में नहीं खड़ी होतीं। वे मिल कर एक संघ (Federation) की स्थापना करती हैं, और उसकी संरक्षणता में कार्य करती हैं। यह संघ सहकारी समितियों को एक दूसरे की प्रतिस्पर्धा नहीं करने देता। यद्यपि यह स्वीकार करना पड़ेगा कि प्रतिस्पर्धा बिलकुल नष्ट नहीं हो गई है—और यहां तक सहकारिता आन्दोलन को अपने ध्येय में असफल ही समझना चाहिये—किन्तु इससे यह न समझना

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

चाहिये कि यह सिद्धान्त ही ग़लत है। कारण यह है कि समाज का संगठन ही दूषित है, और जब तक सहकारिता के सिद्धान्तों के अनुसार समाज का संगठन नहीं हो जाता, तब तक प्रतिस्पर्धा जड़ से नष्ट नहीं हो सकती। यदि उपभोक्ता भी अपने को सहकारी समितियों में संगठित करलें, और फिर संगठित उत्पादक सहकारी समितियों से अपनी आवश्यक वस्तुओं को ख़रीदें तो प्रतिस्पर्धा को नष्ट किया जा सकता है। सहकारिता आन्दोलन का यही लक्ष्य है। अस्तु, सहकारिता तथा अन्य प्रणालियों में यही मुख्य भेद है कि एक प्रतिस्पर्धा का समूल नाश करना चाहती है, दूसरी प्रतिस्पर्धा को स्वीकार करती हैं। यह तो पूर्व ही कहा जाचुका है कि अभी तक यह सिद्धान्त पूर्ण रूप से कार्य में परिणित नहीं हो सका है।

सहकारिता आन्दोलन केवल सम्पत्ति को उत्पन्न करने वालों की ही रक्षा नहीं करता, वह सब वर्गों को सहायता पहुँचाता है। आधुनिक औद्योगिक संगठन में उपभोक्ता का वस्तुओं के मूल्य निर्धारण में कोई हाथ नहीं होता, और न धन्धों के संचालन में ही उसकी आवाज़ सुनी जाती है। उत्पत्ति करने वालों तथा उपभोक्ताओं के बीच में अगणित दलाल काम करते हैं, जो उपभोक्ता तथा उत्पत्ति करने वालों को लूटते हैं। उपभोक्ता वस्तु का जो मूल्य देता है उसका बहुत थोड़ा अंश उत्पत्ति करने वाले को मिलता है, अधिक अंश तो दलालों की जेब में जाता है। सहकारिता आन्दोलन जहां यह प्रयत्न करता है कि उत्पत्ति करने

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

वालों को अधिक से अधिक लाभ हो, वहां उसका यह भी प्रयत्न होता है कि उपभोक्ताओं को सस्ते दामों पर वस्तुएं मिलें, जिससे कि उनका बोझ हलका हो। यदि देखा जावे तो लाभ उपभोक्ताओं से मिलता है; यदि उपभोक्ता तैयार माल को न लें तो केवल उत्पत्ति से लाभ नहीं मिल सकता। अस्तु, सहकारिता आन्दोलन केवल श्रमजीवी तथा पूँजीपति को ही लाभ का अधिकारी नहीं मानता, वरन् उपभोक्ताओं को भी लाभ के कुछ अंश का हक़दार समझता है। सहकारिता के सिद्धान्तानुसार, समाज में केवल दो वर्ग होने चाहियें, उत्पादन-कर्ता और उपभोक्ता। किन्तु इस पूँजीवाद के युग में उपभोक्ता तथा उत्पादन-कर्ता के बीच में अगणित दलाल हैं, जो दोनों वर्गों को लूट रहे हैं। सहकारिता दलालों के द्वारा इन दोनों वर्गों के शोषण का घोर प्रतिवाद करती है और दोनों वर्गों को संगठित करके इतना समीप लाना चाहती है कि फिर दलालों की आवश्यकता ही न पड़े। दलालों को अपने स्थान से हटा देना सहकारिता आन्दोलन का मुख्य उद्देश्य है।

अब एक प्रश्न यह उठता है कि धन्धों का नियन्त्रण किस वर्ग के हाथ में होना चाहिये। धन्धों का संचालन उपभोक्ता करें, अथवा उत्पादन-कर्ता। इस विषय में सहकारिता आन्दोलन में कार्य करने वालों के दो मत हैं। एक मत के लोग कहते हैं उपभोक्ता वर्ग को धन्धों का संचालन करना चाहिये, दूसरे मत के लोग यह अधिकार उत्पादन-कर्ता वर्ग को देना चाहते हैं। सह-

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कारिता आन्दोलन में कार्य करने वालों का बहुमत इस पक्ष में है कि खेती-बारी को छोड़कर अन्य धन्धों के संचालन का अधिकार उपभोक्ता को होना चाहिये, और इन धन्धों में काम करने वालों की स्थिति मज़दूरी पाने वालों से अच्छी नहीं होगी। जहां जहां उपभोक्ता सहकारी समितियों का संगठन हुआ है और उनके सम्मिलित संघ ने स्वयं आवश्यक वस्तुओं को तैयार करने के लिये मिल और कारख़ाने खोले हैं, उनमें काम करने वाले मज़दूरों को उस कारख़ाने के संचालन में कोई अधिकार नहीं है। यद्यपि इन कारख़ानों में मज़दूरों की स्थिति साधारणतः कारख़ानों से बहुत अच्छी होती है, किन्तु उनका कोई अधिकार नहीं होता। हां, यदि वे भी उन उपभोक्ता समितियों के सदस्य होते हैं, जिनके सम्मिलित संघ ने उस कारख़ाने को चलाया है, तो वे उस रूप में उस कारख़ाने की व्यवस्था में भाग लेते हैं। मज़दूरों को व्यवस्था में भाग न लेने देने का कारण यह भी है कि उससे व्यवस्था के शिथिल होजाने का भय रहता है। जिन समितियों में उत्पादन कर्ता ही सदस्य होते हैं और वे ही मज़दूर होते हैं, वहां व्यवस्था उन्हीं के हाथ में रहती है। किन्तु कहीं कहीं ऐसा देखने में आता है कि ऐसी समितियों में भी, उन सहकारी साख समितियों अथवा सहकारी उपभोक्ता समितियों का व्यवस्था में अधिक अधिकार रहता है जो उत्पादक समितियों को पूँजी देती हैं। ऐसी दशा में उत्पादक समिति के सदस्य अर्थात् मज़दूरों का व्यवस्था में नाममात्र को अधिकार होता है। जहां तक सहकारिता आन्दोलन

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

उत्पत्ति करने वालों को उस धंधे की व्यवस्था का अधिकार नहीं दिला सका है, वहां तक उसको अपने लक्ष्य में असफल ही समझना चाहिये।

यद्यपि सहकारिता आन्दोलन विशेषकर आर्थिक आन्दोलन है, किंतु इसकी नींव ऊँचे आदर्श पर जमाई गई है। यह आन्दोलन समाज में एक नवीन भावना को जागृत करता है। स्वावलम्बन तथा भ्रातृ-भाव ही वह भावना है, जिसके बल पर यह आन्दोलन खड़ा किया गया है। सहकारिता आन्दोलन समाज में किसी एक वर्ग का अत्याचार सहन नहीं करता, वह तो समाज के सदस्यों में आत्म-निर्भरता तथा भाईचारे का भाव उत्पन्न करता है। सब मिलकर एक उद्देश्य के लिये प्रयत्न करें, यही सहकारिता का अर्थ है। व्यक्तिवाद को हटाकर सहकारिता आन्दोलन सामूहिक स्वार्थ को प्रधानता देता है। पूँजीवाद के युग में व्यक्तिगत स्वार्थ का प्राधान्य है, किन्तु सहकारिता समूह को व्यक्ति के ऊपर रखता है।

पूँजीवाद के युग में आर्थिक असमानता तथा अन्य दोषों के कारण समाज घबरा उठी है। कोई कोई तो पूँजीवाद को समूल नाश कर देना चाहते हैं। साम्यवाद इसी असमानता को नष्ट करने का एक प्रयोग है। किंतु सहकारिता आन्दोलन साम्यवाद के सिद्धान्तों को स्वीकार नहीं करता। जो लोग संसार के देशों को साम्यवादी होने से बचाना चाहते हैं उन्हें सहकारिता आन्दोलन की शरण में आना चाहिए। बीसवीं शताब्दी में सहकारिता आन्दोलन ने यथेष्ट उन्नति की है, और आशा है भविष्य में इसका

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

अधिकाधिक उपयोग समाज के निर्बल सदस्यों की आर्थिक स्थिति के सुधारने में किया जावेगा।

भारतवर्ष के लिये सहकारिता का सिद्धान्त नया नहीं है। अत्यन्त प्राचीन काल से सहकारिता का हमारी भारतीय समाज उपयोग करती आ रही है। यद्यपि वर्तमान रूप में सहकारी समितियां इस देश के लिये नई वस्तु हैं, किन्तु सिद्धान्त रूप से तो सहकारिता हिन्दू समाज के जीवन में ओत-प्रोत है। सम्मिलित कुटुम्ब,जो कि हिंदुओं की एक अत्यन्त प्राचीन सामाजिक संस्था है, सहकारी संस्था नहीं तो क्या है? आज भी बहुत से कार्य गांवों में किसान लोग सामूहिक रूप में करते हैं। संयुक्तप्रांत के ईख उत्पन्न करने वाले किसानों में यह बात बहुत से गांवों में प्रचलित है कि वे एक या दो कोल्हू मिलकर मोल ले लेते हैं अथवा किराये पर ले आते हैं तथा बारी बारी से अपनी ईख पेर लेते हैं। अपने अर्थशास्त्र में बहुत बार सामूहिक रूप से कार्य करने के लिये आदेश करते हुए,आचार्य कौटिल्य ने सहकारिता का महत्व बतलाया है। प्राचीन काल में कारीगरों के संघ भारतवर्ष में बहुत थे जिनका विवरण वेदों तथा मनुस्मृति में मिलता है। 'रस्टिकस लोकिटर' नामक पुस्तक में लिखते हुए, श्री० एम. एल. डार्लिंग ने पञ्जाब के गांवों के विषय में जो विवरण दिया है,उससे ज्ञात होता है कि वहां के गांवों में आज भी सामूहिक रूप से बहुत सा कार्य होता है। किसी किसी गांव में दो से दस तक किसान सम्मिलित होकर एक वर्ष के लिये भूमि जोतते हैं। फ़सल के कटने

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पर पैदावार को,प्रत्येक किसान द्वारा खेत पर किये गये काम तथा उसके बैलों के उपयोग के अनुपात से, बांट दिया जाता है। यह वार्षिक साझेदारी कभी कभी कई वर्षों तक चलती है। बहुत से गांवों में जब फ़सल पकने पर होती है तो एक रखवारा सब खेतों की देख भाल के लिये रख दिया जाता है। फ़सल काटने तथा बोने के समय भी पड़ौसी एक दूसरे की सहायता करते हैं। प्रत्येक घर के मनुष्य गांव के कुओं की मरम्मत के लिये बारी बारी से काम करते हैं। कहीं कहीं सड़क भी गांव के लोग मिल कर बनाते हैं। मदरास प्रान्त में सहकारिता आन्दोलन के श्रीगणेश के पूर्व वहां 'निधि' स्थापित हो चुकी थीं। निधियां एक प्रकार की अर्ध-सहकारी संस्था होती हैं।

लेखक को बहुत बार राजस्थान में यात्रा करने का अवसर मिला है और उसको यह देख कर अत्यन्त आश्चर्य हुआ कि राजस्थान के बहुत से गांवों में शुद्ध सहकारिता का उपयोग ग्रामीण समाज करती है। राजस्थान के दक्षिण में मेवाड़ का प्रसिद्ध राजपूत राज्य है जिसकी राजधानी उदयपुर है। उदयपुर से लगभग ३० मील की दूरी पर मैनार नामक एक गांव है। बहुत समय हुआ जब कि उदयपुर के महाराणाओं ने यह गांव कुछ ब्राह्मणों को दान कर दिया था। आज भी वह गांव उन्हीं ब्राह्मणों की संतानों के अधिकार में है। दो हजार की आबादी वाले इस गांव में अधिकतर ब्राह्मण लोगों की बस्ती है। कुछ निम्न जाति के लोग पंचायत ने बसा लिये हैं जो कि गांव की सेवा करते हैं। गांव की एक

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पञ्चायत है जो कि यहां का शासन करती है। गांव के बीच में एक शिवालय है जो कि पञ्चायत का न्यायालय है। प्रति दिन पञ्च लोग वहीं बैठ कर गांव को समस्याओं पर विचार करते हैं और मुक़द्दमों को निपटाते हैं। मन्दिर में एक पुजारी रहता है जिसको पञ्चायत थोड़ी सी भूमि दे देती है। घर पीछे पञ्चायत छटांक भर घी, सवा सेर तेल, पावभर रुई प्रति वर्ष मन्दिर के ख़र्चे के लिये लेती है। मेवाड़ में सिंचाई के लिये तालाबों का उपयोग अधिक होता है। मैनार में भी एक विशाल जलाशय है, जिसका क्षेत्रफल लगभग तीन वर्ग मील होगा। प्रति वर्ष, वर्षा के पूर्व पंचायत उसके बांध की मरम्मत करवाती है। यह मरम्मत गांव वाले स्वयं कर लेते हैं। नियम यह है कि गांव का प्रत्येक पुरुष स्त्री, तथा लड़का एक घन फुट मिट्टी खोद कर बांध पर डाले। गांव की लड़कियों से यह कार्य नहीं लिया जाता, क्योंकि हिन्दुओं में लड़की को पूज्य समझा जाता है। पञ्च लोग खुदी हुई भूमि को नाप लेते हैं। यदि गांव को किसी बाहरी आदमी अथवा गांव से, राजकीय अदालतों में मुक़द्दमा लड़ना होता है तो पंचायत घर पीछे कर लगा देती है। यदि कोई पंडित मिल जाता है तो पंचायत उसको रखलेती है और वह गांव के लड़कों को पढ़ाता है। राजस्थान के गांवों में नदी अथवा नालों का, जिनमें कि पानी सदा बहता हो, अभाव है, और गरमियों में पशु जब चरने को जाते हैं तो उनको जल का कष्ट होता है; इस कारण वहां यह नियम सर्वत्र प्रचलित है कि प्रत्येक किसान

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बारी बारी से एक दिन कुए पर अपने बैल और चरस लेकर उपस्थित रहता है और जब गांव के पशुओं को जल की आवश्यकता हो तो उन्हें जल पिलाता है। भारतवर्ष में ऐसे बहुत से प्रांत हैं जहां के ग्रामीण जीवन में हमें शुद्ध सहकारिता का स्वरूप देखने को मिलता है। किन्तु,जहां जहां पश्चिमी सभ्यता का प्रभाव अधिक पड़ गया है, वहां व्यक्तिवाद के कारण सामूहिक जीवन नष्ट हो गया है।

भारतवर्ष जैसे कृषि-प्रधान देश में जहां कि कृषि ही मनुष्यों की जीविका का प्रधान साधन है, सहकारिता आन्दोलन कितना आवश्यक है, यह आगे के परिच्छेदों में स्पष्ट हो जावेगा। यदि पुरानी संस्थाओं को पुनर्जीवित किया जावे और आधुनिक सहकारी संस्थाओं का उन्हें रूप देदिया जावे तो देश में ग्राम-सुधार का कार्य सफलता-पूर्वक हो सकता है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

द्वितीय परिच्छेद

भिन्न भिन्न प्रकार की सहकारी समितियां

पिछले परिच्छेद में सहकारिता के सिद्धान्तों की चर्चा कीगई है, उससे यह स्पष्ट हो जाता है कि सहकारिता आन्दोलन का उपयोग प्रत्येक आर्थिक समस्या के हल करने में किया जासकता है। वास्तव में सहकारिता आन्दोलन का क्षेत्र इतना विस्तृत है कि किसी भी देश में सब प्रकार की सहकारी समितियों की एक-सी उन्नति दिखाई नहीं देती। यदि इंगलैंड में उपभोक्ता-सहकारी-स्टोर्स की आश्चर्यजनक सफलता मिली है, जर्मनी में सहकारी साख समितियों तथा बैंकों ने आशातीत सफलता प्राप्त की है, फ्रांस ने उत्पादक सहकारी समितियों की ओर अधिक ध्यान दिया है, इटली में श्रमजीवी सहकारी समितियां विशेष हुई हैं तो डैनमार्क ने सहकारिता का उपयोग खेती-बारी के लिये किया है। भारतवर्ष में सहकारी साख समितियां ही अधिक संख्या में दृष्टि-गोचर होती हैं। बात यह है कि प्रत्येक देश ने अपनी आवश्यकता को पूरा करने के लिये सहकारिता आन्दोलन का उपयोग किया है। जहां जिस प्रकार की सहकारी समितियों की अधिक आवश्यकता थी, वहां उसी प्रकार की समितियां स्थापित कीगईं। हमें अब देखना यह है कि सहकारी समितियां कितनी तरह की होती हैं, और उनकी विशेषता क्या है।

समाज का यदि हम आर्थिक दृष्टि से विभाजन करें तो वह

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

तीन समूहों में बांटी जा सकती है:— सम्पत्ति की उत्पत्ति करने वाले, सम्पत्ति का उपभोग करने वाले, तथा दलाल जो उत्पन्न की हुई सम्पत्ति को उपभोक्ताओं तक पहुँचाते हैं। उत्पन्न करने वालों में वे सभी लोग आजाते हैं जो कि किसी रूप में सम्पत्ति का उत्पादन करते हैं, जैसे किसान, सब प्रकार के कारीगर जो कि गृह उद्योग-धन्धों में लगे हुये हैं, मिल मालिक तथा मिल-मज़दूर। दलालों की श्रेणी के अन्तर्गत वे सभी लोग आते हैं जो कि उत्पन्न की हुई सम्पत्ति को उपभोक्ता के समीप पहुँचाते हैं, जैसे बड़े बड़े व्यापारी, जो विदेशों से व्यापार करते हैं, थोक व्यापारी, फुटकर बेचने वाले, बैलगाड़ी मोटर तथा रेलवे लाइनों पर काम करने वाले, जहाज़ चलाने वाले, तथा कमीशन एजन्ट। तीसरा समूह उपभोग करने वालों का है। देश की समस्त जन संख्या ही इस समूह में आजाती है, क्योंकि कुछ चीजें ऐसी हैं जिन्हें उत्पन्न तो थोड़े से ही लोग करते हैं, किन्तु उपभोग प्रत्येक मनुष्य करता है। अस्तु; उपभोक्ता समूह सब से बड़ा है, इसके बाद उत्पादक समूह आता है, और सबसे छोटे दलाल समूह है।

सहकारिता आन्दोलन मुख्यतः आर्थिक आन्दोलन है। जिस वर्ग की आर्थिक स्थिति कमज़ोर है, उस वर्ग को संगठित करके सबल बनाना ही उसका उद्देश्य है। किसी ने ठीक ही कहा है "सहकारिता तेरा नाम निर्धनता है।" जो निर्धन हैं, वे ही धनिकों की प्रतिद्वन्दिता में खड़े होने के लिये सहकारिता की शरण

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

. Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

आते हैं। वे ही अपना संगठन करते हैं क्योंकि ऐसा किये बिना वे धनी प्रतिद्वन्दी की प्रतिस्पर्धा में खड़े नहीं रह सकते। दलाल समूहों के लोगों को, जो कि शक्तिवान और सम्पन्न होते हैं, और जिन्होंने बाज़ार पर अपना एकाधिपत्य जमा रखा है, सहकारिता की सहायता नहीं चाहिये। दलाल, उत्पादक समूह को उसके परिश्रम के लिये कम से कम मूल्य देकर उपभोग करने वालों से अधिक से अधिक मूल्य लेते हैं। सहकारिता आन्दोलन ऐसे समूह की कोई सेवा नहीं कर सकता। ऊत्पादक समूह तथा उपभोक्ता समूह में से भी सहकारिता उन्ही लोगों की सेवा कर सकती है जो कि निर्बल हैं और जिन पर आर्थिक अत्याचार हो रहा है।

उत्पादक समूह उत्पादक सहकारी समितियां स्थापित कर सकता है। उत्पादक सहकारी समितियां प्रत्येक धन्धे तथा प्रत्येक स्थान के लिये पृथक् होंगी। उदाहरण के लिये बुनकर सहकारी समितियां प्रत्येक स्थान के लिये पृथक् होंगी, जैसे बनारस सिल्क-वीवर्स सहकारी समिति, लुधियाना बुनकर सहकारी समिति। इसी प्रकार उपभोक्ता समितियां भी प्रत्येक स्थान के लिये अलहदा होंगी। यही नहीं, उपभोक्ता सहकारी समितियां एक पेशे में काम करने वालों के लिये भी अलहदा होती हैं, जैसे इलाहाबाद के लिये एक सहकारी उपभोक्ता स्टोर्स हो सकता है, प्रयाग विश्व-विद्यालय के विद्यार्थियों के लिये विश्व विद्यालय सहकारी स्टोर्स हो सकता है, तथा रेलवे कर्मचारियों के लिये रेलवे स्टोर्स चलाया

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

जा सकता है। अस्तु, सहकारी समितियों के दो मुख्य भेद हैं, उत्पादक समितियां और उपभोक्ता समितियां। उत्पादक समितियों का उद्देश्य यह होता है कि माल को कम व्यय करके तैयार किया जावे और उसे अच्छे दामों पर बेचा जावे, जिससे कि उत्पत्ति करने वालों को अधिक लाभ हो। उपभोक्ता स्टोर्स का ध्येय यह होता है कि तैयार माल को सस्ते दामों पर ख़रीदें और अपने सदस्यों को सस्ते दामों पर दें। इस प्रकार दोनों ही तरह की सहकारी समितियां दलालों को अपने स्थान से हटा देने का प्रयत्न करती हैं। उपभोक्ता स्टोर्स बीच के दलालों को तो हटा ही देते हैं, उनका लक्ष्य यह होता है कि आवश्यक वस्तुओं का उत्पादन भी वही करें। जहां उपभोक्ता समितियां अधिक संख्या में स्थापित हो गई हैं वहां वे उत्पादन कार्य भी करने लगीं हैं। दूसरी ओर उत्पादक समितियां बीच के सब दलालों को अपने स्थान से हटा, उपभोक्ता से सीधा सम्बन्ध स्थापित करना चाहती हैं। पाठक कह सकते हैं कि तब तो यह दो प्रकार की समितियां एक दूसरे की विरोधी हुईं, और देखने से ऐसा प्रतीत भी होता है। किन्तु जब समाज का आर्थिक संगठन सहकारिता के सिद्धान्तों के अनुसार होगा और समाज एक वृहद सहकारी संगठन का रूप धारण करलेगी तब इन दो प्रकार की समितियों का पारस्परिक विरोध मिट जायगा, और उत्पत्ति करने वालों को अपने माल का उचित मूल्य मिलेगा तथा उपभोग करने वालों को उचित मूल्य देना होगा।

13989

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

इन दो प्रकार की समितियों के अन्तर्गत बहुत प्रकार की समितियां होती हैं, उदाहरण के लिये साख समितियां, तथा बैंक। भारतवर्ष में सहकारी साख समितियां ही अधिकतर स्थापित की गई हैं। भारतवर्ष कृषि प्रधान देश है; देश की तीन चौथाई जन संख्या खेती-बारी पर अपने उदर पालन के लिये निर्भर रहती है। इसके अतिरिक्त देश की ६० प्रति शत जन-संख्या गांवों में निवास करती है। गांव की आवश्यकतायें शहरों से भिन्न होती हैं। गांव वालों की खेती-बारी के लिये साख की अत्यन्त आवश्यकता होती है। प्रत्येक मनुष्य को जो कि किसी धंधे में लगा हुआ है साख की अवश्यकता पड़ती है। उसकी स्थिति इतनी खराब होती है कि उसको कोई व्यापारिक बैंक पूँजी नहीं देता, इस कारण उसको महाजन की शरण जाना पड़ता है। महाजन किसान का इस प्रकार दोहन करता है कि वह कभी पनप ही नहीं सकता और सर्वदा ऋणी रहता है। सहकारी साख समितियां उसकी आर्थिक स्थिति को सुधारने का प्रयत्न करती हैं। साख समितियों के अतिरिक्त किसानों के लिये अन्य प्रकार की सहकारी समितियां भी स्थापित की गईं हैं, जैसे चकबंदी सहकारी समितियां, दूध सहकारी समितियां, सिंचाई सहकारी समितियां, क्रय समितियां, विक्रय समितियां इत्यादि। भारतवर्ष में किसानों के अत्यन्त ऋणी होने के कारण तथा साख का विशेष महत्व होने के कारण, यहां सहकारी समितियां दो श्रेणियों में बांटी जाती हैं, साख समितियां, ग़ैर-साख-समितियां।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

अन्तर्राष्ट्रीय कृषि इंस्टीट्यूट ने समितियों का निम्न लिखित विभाजन किया है:—(१) साख, (२) उत्पादक, (३) क्रय, (४) विक्रय। एक ही समिति एक, या एक से अधिक कार्य कर सकती है। उदाहरण के लिये एक ही समिति क्रय विक्रय का कार्य करती है।

वास्तव में सहकारी समितियां कितने प्रकार की होती हैं, यह बताना कठिन है। यह तो पूर्व ही कहा जाचुका है कि प्रत्येक आर्थिक समस्या को हल करने लिये सहकारिता का उपयोग किया जासकता है और किया गया है। अब आगे के परिच्छेदों में हम भारतीय सहकारी समितियों के विषय में विस्तार पूर्वक लिखेंगे, किन्तु इससे पहले हमें भिन्न, भिन्न प्रकार की समितियों का संगठन कैसे होता है यह जान लेना चाहिये।

खेती-बारी के लिये साख समितियां—भारतवर्ष कृषि प्रधान देश है, इस कारण हम प्रथम साख समितियों पर विचार करेंगे। आधुनिक आर्थिक संगठन में साख का अत्यन्त महत्व है, बड़े से बड़ा व्यवसायी और छोटे से छोटा कारीगर भी बिना साख के अपना कार्य नहीं चला सकता। बड़े बड़े व्यवसायी आरम्भ में लाखों रुपये लगाकर मिल खड़ी करते हैं, जब मिल चलने लगती है और तैयार माल बिकने लगता है तब कहीं मिल मालिक को रुपया मिलता है। व्यवसायियों को औद्योगिक बैंकों से आरम्भ में पूँजी मिलजाती है और मज़दूरों के वेतन के

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

लिये व्यापारिक बैंकों से पूँजी उधार लेलेते हैं। व्यापारी तथा दलालों को, जो कि तैयार माल का अथवा खेती-बारी की पैदावार का व्यापार करते हैं, माल लेते समय तो उसका मूल्य देना पड़ता है, परन्तु वह माल बहुत दिनों के बाद बिकता है। ऐसी स्थिति में यदि उन्हें कहीं से पूँजी न मिले तो उनका व्यापार ही चौपट होजावे। अस्तु, व्यापारियों को व्यापारिक बैंक से रुपया मिल जाता है। जो व्यापारी कि विदेशी व्यापार करते हैं उन्हें विनिमय बैंक (Exchange Bank) से साख मिल जाती है। साख के साथ जोखिम भी है। जो बैंक अथवा मनुष्य किसी को ऋण देता है वह पूँजी के मारे जाने की जोखिम भी उठाता है। अस्तु, बिना ज़मानत के कोई भी साख नहीं देता। साख और ज़मानत का साथ है; बिना ज़मानत के साख नहीं मिल सकती। एक निर्धन किसान अथवा कारीगर जिसके पास पूँजी नहीं है, इन बैंकों से ऋण नहीं पासकता, क्योंकि उनके पास ज़मानत कुछ भी नहीं होती। बड़े बड़े व्यापारी व्यवसायियों के पास निजी पूँजी यथेष्ट होती है, इस कारण व्यापारिक बैंक उन्हें कर्ज़ा देदेते हैं। जो बैंक ज़मानत के बिना कर्ज़ा देदेता है उसका दिवाला निकलने में देर नहीं लगती। निर्धन किसानों के पास अधिक सम्पत्ति तो होती नहीं कि जिससे उनकी साख हो, इसके अतिरिक्त एक कठिनाई और भी उपस्थित होती है, उनकी पूँजी की मांग इतनी थोड़ी होती है कि बड़े बड़े व्यापारिक बैंक ऐसा काम लेना पसन्द नहीं करते। मान लीजिये कि एक हज़ार किसान जो कि

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

भिन्न भिन्न गांवों में रहते हैं, बैंक से फ़सल बोने के समय कुल पचास हज़ार रुपया उधार लेना चाहते हैं, अर्थात् प्रत्येक किसान केवल पचास रुपये लेना चाहता है। यदि बैंक इन किसानों को रुपया देना स्वीकार करे तो उसे चार या पांच कर्मचारी केवल इस लिये नियुक्त करने होंगे कि वे इन किसानों की हैसियत की जांच करें और यह बतलावें कि वे ईमानदार हैं अथवा नहीं और उनको रुपया उधार देना चाहिये या नहीं। प्रत्येक बैंक क़र्ज़ देने से पूर्व, क़र्ज़ लेने वाले की आर्थिक स्थिति, वह ईमानदार है अथवा नहीं, उसका कारवार कैसा चल रहा है, इत्यादि बातों की पूरी जांच करने के उपरान्त ही क़र्ज़ देता है। जो बैंक इस विषय में सतर्कता से काम नहीं लेता उसको हानि उठानी पड़ती है। बैंक व्यापारिक केन्द्रों में होते हैं, इस कारण बड़े बड़े व्यापारियों की आर्थिक स्थिति की जांच सरलता पूर्वक होसकती है। व्यापारिक केन्द्र के बड़े बड़े व्यापारियों तथा व्यवसायियों के विषय में बैंक पूरी जानकारी रखता है। किन्तु भिन्न भिन्न गांवों में बिखरे हुये किसानों की आर्थिक स्थिति की ठीक ठीक जांच करना कठिन ही नहीं, व्ययसाध्य भी होगा। इसके अतिरिक्त एक हज़ार किसानों का हिसाब रखना तथा उनसे समय पर वसूल करना भी कठिन तथा व्ययसाध्य होता है। यदि एक व्यापारी पचास हज़ार रुपये उधार लेता है तो बैंक उसकी स्थिति की जांच भी करलेता है। उसके हिसाब के रखने तथा उससे रुपया वसूल करने में न तो अधिक

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कठिनाई और न अधिक व्यय ही करना पड़ता है। इन्हीं कारणों से किसान, छोटे कारीगर तथा अन्य निर्धन लोग इन बड़े बैंकों से क़र्ज़ा नहीं पासकते। यह तो पूर्व ही कहा चुका है कि बिना पूँजी के उत्पादन कार्य चल नहीं सकता, इस कारण किसान और कारीगर को पूँजी की आवश्यकता होती है और उनकी आवश्यकता को महाजन और साहूकार पूरी करते हैं। महाजन और साहूकार किस प्रकार किसान और कारीगर का दोहन करते हैं यह तो अगले परिच्छेदों में लिखा जावेगा, किन्तु यहां यह कह देना अतिशयोक्ति न होगा कि महाजनों का क़र्ज़दार होकर किसान चिर-दास बन जाता है। वह कठिन परिश्रम करता है, किंतु उसका लाभ मिलता है महाजन को। किसान को तो भूखे रहकर महाजन की थैलियों को भरना पड़ता है। किसानों और कारीगरों को इस आर्थिक दासता से छुड़ाने के लिये, और उनको अपने धन्धे के लिये उचित मूल्य पर पूँजी देने का आयोजन करने के लिये सर्व प्रथम जर्मनी में सहकारी साख समितियों की स्थापना हुई। जर्मनी में शुल्ज़ और रैफ़ीसन नामक दो सज्जनों को निर्धन किसानों और कारीगरों की अत्यन्त शोचनीय आर्थिक स्थिति ने आकर्षित किया और दोनों ने ही लगभग एक ही समय देश के दो भिन्न भिन्न भागों में दो प्रकार की सहकारी साख समितियों की स्थापना की।

रैफ़ीसन तथा शुल्ज़ प्रणाली की सहकारी साख समितियां—रैफ़ीसन तथा शुल्ज़ दोनों ही ने निर्धन किसानों

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

और कारीगरों की सामूहिक साख पर पूँजी उधार लेने का आयोजन किया। कुछ लोगों का विचार है कि रैफ़ीसन सहकारी साख समितियां केवल गांव वालों के लिये उपयुक्त हैं तथा शुल्ज़ सहकारी साख समितियां नगर निवासी कारीगरों के के लिये उपयुक्त हैं। वास्तव में बात ऐसी नहीं है। रैफ़ीसन सहकारी साख समितियां उन स्थानों के लिये उपपुक्त हैं जहां अधिक जन संख्या न हो, निवासी एक दूसरे से भली भांति परिचित हों, तथा वहां के निवासी उस स्थान पर स्थायी रूप से रहने वाले हों, साथ ही जनसंख्या अधिक निर्धन हो। गांवों के निवासियों में अधिकतर ऊपर लिखी हुई बातें मिलती हैं, इस लिये गांवों में रैफ़ीसन सहकारी साख समितियां अधिकतर पाई जाती हैं। यही कारण है कि साधारणतः लोग समझते हैं कि रैफ़ीसन सहकारी साख समितियां गांवों के लिये हैं।

इसके विपरीत शुल्ज़ सहकारी साख समितियां ऐसे स्थानों के उपयुक्त होती हैं, जहां जन संख्या अधिक हो जिसके कारण निवासी एक दूसरे से भली भांति परिचित न हों, जन संख्या स्थायी रूप से निवास न करती हो अर्थात् वहां के निवासी काम की खोज में दूसरे स्थानों पर चले जाते हों तथा वे अत्यन्त निर्धन न हों। यह स्थिति अधिकतर नगरों में होती है, इस कारण शुल्ज़ सहकारी साख समितियां शहरों में कारीगरों तथा अन्य लोगों के लिये खोली जाती हैं।

बात यह है कि रैफ़ीसन सहकारी साख समितियां अपरिमित

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

दायित्व वाली होती हैं, इस कारण उनके सदस्यों को स्थायी रूप से एक स्थान का निवासी होना तथा एक दूसरे से भली भांति परिचित होना आवश्यक है। शुल्ज़ समितियां परिमित दायित्व वाली होती हैं इस कारण उनके लिये यह आवश्यक नहीं है।

रैफ़ीसन सहकारी साख समितियां--रैफ़ीसन साख समितियों के संस्थापक श्री० रैफ़ीसन महोदय का जन्म १८१८ में हैम नामक ग्राम में हुआ था। युवा अवस्था में वे सेना में भरती होगये किन्तु शीघ्र ही उन्हें सैनिक जीवन त्यागना पड़ा क्योंकि आंखें ख़राब होगईं। सैनिक जीवन से हट कर वे सिविल सर्विस में आये और शीघ्र ही बरगोमास्टर नियुक्त किये गये। वे एक ज़िले के ज़िलाधीश बनाये गये। यहां पर उनको किसानों की दयनीय दशा का करुणा-जनक दृश्य देखने को मिला। उन्होंने देखा कि वर्ष भर कठिन परिश्रम करते रहने पर भी निर्धन किसान को भर-पेट भोजन नहीं मिलता और वह सर्वदा क़र्ज़दार ही रहता है। यहूदी साहूकार किसान को जोंक की भांति चूसता था और सरकार का उस ओर ध्यान भी नहीं था। किसानों की पैदावार को साहूकार बहुत सस्ते दामों पर ख़रीद लेता था और सूद की दर इतनी अधिक थी कि किसान उसके चँगुल में से कभी भी नहीं निकल सकता था। किसान का मकान भूमि तथा हल और बैल सभी साहूकार के यहां गिरवी रख दिये जाते थे और किसान उसका दास बन जाता था।

रैफ़ीसन का हृदय इस नग्न निर्धनता को देख कर अत्यन्त

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

दुखी हुआ। इसके उपरान्त वे उसी प्रदेश में एक दूसरे ज़िले में भेज दिये गये, वहां की दशा पहले से भी बुरी थी। बस, रैफ़ीसन ने निर्धनता तथा भयंकर क़र्ज़दारी से युद्ध छेड़ दिया। क्रमशः रैफ़ीसन ने सहकारी साख समितियों का देश में एक जाल सा फैला दिया। यह ध्यान में रखने की बात है कि रैफ़ीसन को कोई सरकारी सहायता अथवा सहानुभूति प्राप्त नहीं हुई; आन्दोलन सफल होगया तब भी उन्होंने सरकारी सहायता लेना पसंद नहीं किया। सहकारी साख समितियों ने जर्मनी के गांवों की काया पलट कर दी। किसान साहूकारों के चँगुल से निकल कर ऋण-मुक्त होगये और उनकी आर्थिक स्थिति बहुत सुधर गई।

रैफ़ीसन पद्धति की साख समितियों की निम्न लिखित विशेषतायें हैं :—

रैफ़ीसन महोदय एक गांव में एक ही साख समिति की स्थापना ठीक समझते हैं। यदि गांव अधिक छोटे हों तो दो या तीन गांवों के लिये एक समिति की स्थापना की जा सकती है। रैफ़ीसन का मत है कि समिति के सदस्य बनाने में बहुत छानबीन की आवश्यकता है। अधिक सदस्यों की इतनी आवश्यकता नहीं है जितनी कि चरित्रवान सदस्यों की।

सदस्यों में चाहे कितनी ही आर्थिक विषमता क्यों न हो, किन्तु ग़रीब और अमीर को समिति के प्रबन्ध में बराबर अधिकार है।

Sri Pratap Singh Library Srinagar

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सब सदस्यों की सभा को साधारण सभा कहते हैं। साधारण सभा ही समिति की नीति को निर्धारित करती है और वही प्रबंधकारिणी समिति के सदस्यों को चुनती है। साधारण सभा प्रबन्धकारिणी समिति को समिति का कार्य चलाने तथा सभा द्वारा निर्धारित नीति के अनुसार कार्य करने का अधिकार देती है। साधारण सभा अपने में से ही एक निरीक्षण कौंसिल का चुनाव करती है। निरीक्षण कौंसिल प्रबन्धकारिणी समिति के सदस्यों के कार्य का निरीक्षण करती है। प्रबन्धकारिणी समिति तथा निरीक्षण कौंसिल के सदस्यों को कोई वेतन, फ़ीस, अथवा कमीशन नहीं दिया जाता। केवल कैशियर को थोड़ा वेतन दिया जाता है, किन्तु उसको कोई अधिकार नहीं होता वह केवल समिति का नौकर होता है।

रैफ़ीसन के अनुसार साख समितियों के सदस्यों से न तो फ़ीस लेने की आवश्यकता है और न उन्हें समिति का हिस्सा ख़रीदने की। जब जर्मन सरकार ने एक क़ानून बना दिया कि सदस्यों को हिस्से ख़रीदने चाहिये तब भी रैफ़ीसन सहकारी समितियों ने अपने हिस्से का मूल्य नाम मात्र को रखा; इसका उद्देश्य यह है कि ग़रीब किन्तु सचरित्र किसान समिति का सदस्य बनने से वंचित न रह जावें।

रैफ़ीसन, समिति के लाभ को बांटने नहीं देता। उसका कथन है कि यदि लाभ सदस्यों में बांटा जावेगा तो उन में लालच बढ़ जावेगा। वार्षिक लाभ रक्षित कोष में जमा होना चाहिये।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

रक्षित कोष को क्रमशः बढ़ाते रहने पर रैफ़ीसन ने बहुत ज़ोर दिया है। वह कहता था कि रक्षित कोष ही इस आन्दोलन का स्तम्भ है। यदि किसी वर्ष समिति को हानि हो तो वह इस कोष से पूरी की जा सकती है, किन्तु इसके अतिरिक्त सबसे बड़ा लाभ यह है कि अधिक कोष हो जाने से समिति के पास अपनी निज की कार्यशील पूँजी हो जायगी और उधार नहीं लेनी होगी। इसका फल यह होगा कि समिति सूद की दर को घटा सकेगी और सदस्यों को कम सूद पर कर्ज़ा मिल सकेगा।

यदि रक्षित कोष अधिक होजावे तो यह रुपया गांव में किसी सार्वजनिक हित के कार्य में व्यय किया जाता है। यदि कभी समिति टूट भी जावे तो भी सदस्य रक्षित कोष को आपस में नहीं बांट सकते; समिति के टूट जाने पर कोष में जमा किया हुआ रुपया किसी ऐसी सार्वजनिक संस्था के पास जमा कर दिया जाता है जो भविष्य में, यदि उस गांव में कोई दूसरी सहकारी समिति स्थापित हो, तो उसको देदे। कुछ समय व्यतीत होजाने पर भी कोई दूसरी सहकारी समिति स्थापित न हो तो वह रुपया उसी गांव के सार्वजनिक हित के कार्यों पर व्यय कर दिया जावे। रैफ़ीसन ने यह नियम इस लिये बनाया कि कहीं ऐसा न हो कि अधिक कोष जमा हो जाने पर सदस्य समितियों को तोड़ कर कोष का धन बांट लें।

क़र्ज़ देने के लिये रैफ़ीसन ने यह सिद्धान्त निश्चित किया कि ऋण केवल उसी आदमी को दिया जाना चाहिये जो समिति की

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

प्रबन्ध कमेटी को निश्चय करा सके कि उसको पूँजी की आवश्यकता है और जिस कार्य को वह करने जारहा है उसमें सफल होने की सम्भावना है। समिति उत्पादक कार्यों के लिये ही रुपया दे, अनुत्पादक तथा व्यर्थ कार्यों के लिये रुपया न देना चाहिये। जब समिति एक बार सदस्य की आवश्यकता के विषय में छानबीन करके क़र्ज़ा देदे तब यह देखना चाहिये कि जिस कार्य के लिये सदस्य ने क़र्ज़ा लिया है उसके अतिरिक्त और किसी कार्य में तो व्यय नहीं किया। निरीक्षण कौंसिल प्रत्येक तीन महीने के उपरान्त सदस्य तथा उसकी ज़मानत देने वालों की आर्थिक स्थिति की, तथा उस रुपये के उपयोग की जांच करती है। यदि यह ज्ञात हो कि सदस्य ने क़र्ज़ा का ठीक उपयोग नहीं किया तो उस से फ़ौरन ही रुपया वापिस मांगना चाहिये। समिति की आर्थिक स्थिति को मज़बूत बनाये रखने के लिये यह अत्यन्त आवश्यक है।

सदस्य को क़र्ज़ा देते समय ही उस पर सूद का हिसाब लगाकर किश्तें बांध दीजाती हैं। रैफ़ीसन ने किश्तों को ठीक समय पर वसूल करने के लिये बहुत ज़ोर दिया है। उसका कहना है कि समिति इस नियम के पालन करने तथा सदस्यों से पालन करवाने में बड़ी कड़ाई से काम ले। सदस्य को ठीक समय पर ही किश्त का रुपया देना चाहिये। इससे सदस्यों को एक बहुत बड़ा लाभ यह होता है कि वे अपने क़र्ज़ा को ठीक समय चुका देने के लिये वाध्य होते हैं; इस लिये वह लापरवाह नहीं होते।

रैफ़ीसन का मत था कि सदस्य को कर्ज़ा देने का कार्य ऐसी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सरलता पूर्वक होना चाहिये कि न तो उसमें सदस्य को कोई कठिनाई ही हो, और न क़र्ज़ा मिलने में देरी हो। कर्ज़ के विषय में जांच कर चुकने के उपरान्त एक या दो ज़मानत लेकर रुपया देदेना चाहिये।

जर्मनी में रैफ़ीसन सहकारी साख समितियों ने तो देश की दशा ही पलट दी। जर्मनी की ग्रामीण जन संख्या कर्ज़े के भयंकर बोझ से दबी हुई आर्थिक दासता को भोग रही थी, वही निर्धन किसानवर्ग रैफ़ीसन सहकारी समितियों की सहायता से स्वावलम्बन का पाठ सीख गया और महाजनों की दासता से स्वतंत्र होकर सुखी जीवन व्यतीत करने लगा। सच तो यह है कि रैफ़ीसन ने अपने देश के लिये वह कार्य किया जो कि बड़े से बड़ा राजनीतज्ञ भी नहीं कर सकता था। यही कारण था कि सन् १८१८ में जब किसानों की सेवा में अपने जीवन को लगा देने वाले श्री० रैफ़ीसन का स्वर्गवास हुआ तो आधा जर्मन साम्राज्य शोक-ग्रस्त होगया था। आज भी जर्मनी में पिता रैफ़ीसन का नाम अत्यन्त श्रद्धा और भक्ति से लिया जाता है।

रैफ़ीसन सहकारी साख समितियां जब जर्मनी में फैल गईं तो उत्पादक, क्रय, विक्रय, दूध सहकारी समितियां तथा अन्य सभी प्रकार की समितियां स्थापित होगईं। सहकारी समितियां अधिक होजाने के कारण, समितियों के समूहों की यूनियन स्थापित की गई हैं। जर्मनी में इस प्रकार की १३ यूनियन हैं जो कि सब रैफ़ीसन सहकारी समितियों का संरक्षण करती हैं। इन यूनियनों

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

के भी ऊपर एक कौंसिल है जो कि रैफ़ीसन सहकारिता आन्दोलन की बागडोर संभालती है। कौंसिल की देखभाल में एक बैंक भी स्थापित किया गया है जो कि साख समितियों की आवश्यकताओं को पूरी करता है।

किन्तु रैफ़ीसन सहकारी साख समितियों की विशेषता अपरिमित दायित्व (Unlimited liability) है । रैफ़ीसन ने अपरिमित दायित्व पर बहुत ज़ोर दिया है। रैफ़ीसन के अनुसार वास्तविक सहकारिता वही है जहां प्रत्येक सदस्य अपने को समिति-रूपी बड़े कुटुम्ब का सदस्य समझे; और, उन सदस्यों का आदर्श हो—"एक सब के लिये, सब एक के लिये"। इस आदर्श को वास्तविक रूप में सदस्यों को समझाने के लिये अपरिमित दायित्व अत्यन्त आवश्यक है। दायित्व का अर्थ है कि प्रत्येक सदस्य समिति के समस्त ऋण को सम्मिलित तथा व्यक्तिगत रूप में देने का ज़िम्मेदार है। रैफ़ीसन सहकारिता आन्दोलन का यह आधार-स्तम्भ है, जिस पर इतना बड़ा आन्दोलन खड़ा किया गया है।

शुल्ज़ सहकारी साख समितियां—सहकारिता साख आन्दोलन को जन्म देने का श्रेय जर्मनी को है । सहकारिता के के दो भक्त रैफ़ीसन तथा शुल्ज़ लगभग एक ही समय में एक ही देश में स्वतन्त्र रूप से कार्य कर रहे थे। किन्तु प्रारम्भ में वे एक दूसरे को बिलकुल न जानते थे और न उनको एक दूसरे के कार्य का ही परिचय मिला। एक पूर्व जर्मनी में सहकारिता आन्दोलन

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

का प्रचार कर रहे थे तो दूसरे सज्जन पश्चिम में सहकारिता आन्दोलन को चला रहे थे। रैफ़ीसन तथा शुल्ज़ दोनों ही के हृदय में अपने ग्राम-वासियों की दरिद्रता को देखकर सेवा भाव जागृत हुआ, और उसके फल-स्वरूप उन्होंने सहकारिता आन्दोलन चलाया। अस्तु, शुल्ज़ ने अपने मित्र डाक्टर बर्नहार्डी की सहायता से अपने गांव डैलिट्ज़ तथा अपने मित्र के गांव ईलनबर्ग में वहां के चमारों तथा अन्य कारीगरों के लिये कच्चा माल ख़रीदने के लिये दो सहकारी समितियां खोलीं। तबसे क्रमशः क्रय समितियों का प्रचार बढ़ता गया और अब वे जर्मनी में सर्वत्र पाई जाती हैं। क्रय समितियों की सफलता से उत्साहित होकर शुल्ज ने १८६० में पहली साख समिति स्थापित की। किन्तु वह पूर्णतया सहकारी समिति नहीं थी। इसी बीच में शुल्ज़ को कुछ समय के लिये कार्यवश बाहर जाना पड़ा और उसके मित्र डाक्टर बर्नहार्डी ने ईलनबर्ग में एक शुद्ध सहकारी साख समिति स्थापित की। १८५२ में जब शुल्ज़ डैलिट्ज़ को लौटा तो वह अपने मित्र द्वारा स्थापित समिति के शुद्ध सहकारी रूप को देखकर अत्यन्त प्रसन्न हुआ और उसने वही सिद्धान्त अपना लिया।

अब शुल्ज़ ने बड़े उत्साह से इस सिद्धांत का प्रचार करना प्रारम्भ किया। शुल्ज़ के व्यक्तित्व, उनकी धारा-प्रवाहिणी भाषण शक्ति, तथा उनकी सच्ची लग्न का फल यह हुआ कि साख समितियां बहुत बड़ी संख्या में स्थापित होगईं। किन्तु अभाग्यवश

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

जर्मन सरकार उसके इस कार्य से अप्रसन्न होगई और शुल्ज़ (जो कि न्यायाधीश था) को अपने पद से त्यागपत्र देना पड़ा। इसके उपरान्त शुल्ज़ ने अपना समय इस कार्य में लगा दिया।

शुल्ज़ सहकारी समितियों का अध्ययन करते समय यह बात ध्यान में रखने की है कि शुल्ज़ ने यह आन्दोलन मध्य श्रेणी के मनुष्यों और विशेषकर कारीगरों के लिये चलाया था। और, अब भी इन समितियों से मध्य श्रेणी के मनुष्यों को ही लाभ होता है। शुल्ज़ ने अपने आन्दोलन को चरित्र सुधार का साधन नहीं बनाया, उसने केवल आर्थिक समस्या को ही सुलझाने का प्रयत्न किया। इन सहकारी समितियों में निर्धनों के लिये स्थान नहीं है क्योंकि शुल्ज़ समितियों में सदस्यों को हिस्सा अवश्य ख़रीदना पड़ता है, और हिस्से का मूल्य अधिक होता है। उसका मत था कि समिति को उधार ली हुई पूँजी पर निर्भर नहीं रहना चाहिये, सदस्यों को हिस्से ख़रीदने चाहियें और बैंक के पास निजी यथेष्ट पूँजी होनी चाहिये।

जिस समय शुल्ज़ ने आन्दोलन चलाया उस समय परिमित दायित्व का सिद्धान्त जर्मनी में किसी को ज्ञात नहीं था और न राजकीय क़ानून ही उसको मानता था। इस कारण प्रारम्भ में यह समितियां अपरिमित दायित्व वाली थीं। किन्तु शुल्ज़ ने रैफ़ीसन की भांति अपरिमित दायित्व को आवश्यक नहीं माना। इसका फल यह हुआ कि उसकी मृत्यु के उपरान्त जब जर्मनी में पर-मित दायित्व का सिद्धान्त मान लिया गया तो बहुत सी समितियों

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

ने परिमित दायित्व के सिद्धान्त को अपना लिया। किन्तु इस समय भी यथेष्ट संख्या में शुल्ज़ समितियां अपरिमित दायित्व को अपनाये हुये हैं।

शुल्ज़ समितियों की विशेषता यह है कि वे अपनी यथेष्ट पूँजी इकट्ठी करना चाहती हैं। इसी कारण सदस्यों के लिये हिस्सों का ख़रीदना आवश्यक समझा गया। इसके अतिरिक्त शुल्ज़ ने सुरक्षित कोष को जमा करने पर बहुत ज़ोर दिया है क्योंकि उसका उद्देश्य किसी प्रकार बैंक की निजी पूँजी को बढ़ाना था। किन्तु यह न समझ लेना चाहिये कि यह सहकारी साख समितियां लाभ नहीं बांटती। लाभ का कुछ भाग सुरक्षित कोष में जमा करने के उपरान्त, लाभ सदस्यों में बांट दिया जाता है।

शुल्ज़ ने व्यक्तिगत ज़मानत पर क़र्ज़ देने के सिद्धान्त को अपनाया है, तथा क़र्ज़ को समय पर वसूल करने पर बहुत ज़ोर दिया है। इन समितियों में सदस्य अपनी वार्षिक बैठक में एक कमेटी का निर्वाचन करते हैं, और यह कमेटी अपने सदस्यों में से एक कार्यकारिणी समिति का निर्वाचन करती है। कार्यकारणी समिति, समिति का कार्य चलाती है तथा कमेटी उसके कार्य का निरीक्षण करती है। शुल्ज़, कार्यकारिणी समिति के सदस्यों तथा पदाधिकारियों को वेतन देने के पक्ष में है।

वास्तव में यह सहकारी साख समितियां विस्तृत क्षेत्र के लिये उपयुक्त हैं। इस कारण वे पूर्ण रूप से व्यापारिक संस्था

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

होती हैं। अस्तु, व्यापारिक कार्य सफलता-पूर्वक करने के लिये अधिक पूँजी की आवश्यकता होती है और वेतन-भोगी कर्मचारी रखने पड़ते है।

लुज़्ज़ती समितियां (पीपुल्स बैंक)—लुज़्ज़ती ने शुल्ज़ प्रणाली का सुधार करके उसे अपनाया। आस्ट्रिया राज्य का कोप-भाजन बन कर भागा हुआ लुज़्ज़ती इटली में अपनी योग्यता के कारण अर्थशास्त्र का अध्यापक बन गया और उसने शुल्ज़ के विचारों का अध्ययन करने के उपरान्त मिलन में बैंक स्थापित किया। किंतु लुज़्ज़ती जैसा योग्य व्यक्ति यह भली भांति समझता था कि जर्मन संस्था इटली में सफल न होगी। इस कारण उसने शुल्ज़ समितियों का नवीन संस्कार करके उसका प्रचार किया।

लुज़्ज़ती ने अपरिमित दायित्व के स्थान पर सिद्धांत रूप से परिमित दायित्व को अपनाया। इसके अतिरिक्त उसने शुल्ज़ की भांति अधिक मूल्य के हिस्से न रखकर बहुत थोड़े मूल्य के हिस्से रक्खे और बहुतसी किश्तों में हिस्सों के मूल्य चुकाने का नियम बनाया जिससे कि निर्धन मनुष्य समिति के सदस्य बन सकें। लुज़्ज़ती ने यह नियम बनाया कि दस मास के अन्दर सदस्य को हिस्से का मूल्य चुका देना होगा। लुज़्ज़ती का विचार यह था कि यह थोड़ीसी पूँजी बाहर की पूँजी को आकर्षित कर सकेगी, अर्थात् इसकी गारंटी पर बाहर से क़र्ज़ मिल सकेगा। साथही, उसने अधिकतर सेविंग्स डिपाज़िट लेकर अपनी कार्यशील पूँजी को बढ़ाने पर ज़ोर दिया। उसका कहना था कि यदि कार्यशील

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पूँजी की आवश्यकता हो तो सेविंग्स डिपाज़िट आकर्षित करो। यद्यपि हिस्सों की पूँजी तो बाहरी क़र्ज़ के लिये ज़मानत का काम देगी ही, किन्तु लुज्ज़ती के मतानुसार वास्तविक ज़मानत तो समिति के सदस्यों की ईमानदारी होगी। उसने कहा कि "ईमानदारी को पूँजी में परिणित करो"। इस उद्देश्य को पूरा करने के लिए उसने ऐसा संगठन बनाया कि जिससे सदस्यों को ईमानदार रहने में ही अपना हित दिखलाई दे और वे एक दूसरे को ईमानदार बनाने में सहायक हों। लुज्ज़ती ने इस बात को लक्ष्य में रखकर समिति के कार्य की ज़िम्मेदारी को बांट दिया जिससे कि प्रत्येक सदस्य को कुछ न कुछ ज़िम्मेदारी का कार्य करना पड़े। इस कारण लुज्ज़ती समितियों में सदस्यों को लेते समय उनके चरित्र पर विशेष ध्यान रक्खा जाता है। प्रत्येक सदस्य को समिति का थोड़ा बहुत कार्य करना पड़ता है, जो क़र्ज़ दिया जाता है वह बहुत जांच करने बाद दिया जाता है तथा कोई बात गुप्त नहीं रक्खी जाती जिससे कि प्रत्येक सदस्य समिति की दशा से पूर्ण परिचित रहे। लुज्ज़ती, प्रबन्धकारिणी समिति तथा अन्य पदाधिकारियों को वेतन देने के पक्ष में बिलकुल नहीं है।

लुज्ज़ती समितियों में प्रबन्ध का कार्य एक कमेटी करती है जिसका निर्वाचन साधारण सभा करती है। प्रबन्ध कमेटी के सदस्य संख्या में अधिक होते हैं और यह आवश्यकता समझी जाती है कि प्रबन्ध कमेटी में सब प्रकार के सदस्यों के प्रतिनिधि हों। किन्तु कमेटी बड़ी होने के कारण उसके सदस्य बैंक के

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

दैनिक कार्य का सुचारु रूप से नहीं चला सकते, इस कारण कमेटी अपने में से एक उप-समिति बना देती है जो इस कार्य को करती है। यह उप-समिति केवल एक वर्ष के लिए बनाई जाती है, फिर दूसरे वर्ष दूसरे सदस्यों की उप-समिति बनाई जाती है। उप-समिति का एक सदस्य प्रति दिन बैंक में रहता है और उसकी आज्ञा के बिना कार्य नहीं होसकता।

इटली की ग्रामीय साख समितियां—इटली में जिस प्रकार शुल्ज़ के विचारों को अपना कर लुज्ज़ती ने पीपुल्स बैंक स्थापित किये, ठीक उसी प्रकार इटली ने अपने रैफ़ीसन को भी ढूँढ निकाला। पीपुल्स बैंक छोटे व्यापारियों तथा सम्पन्न किसानों के लिये अत्यन्त उपयोगी प्रमाणित हुए, किन्तु निर्धन छोटे छोटे किसानों के लिये, जो गांवों में निवास करते हैं, उनका कोई उपयोग नहीं था। साथ ही गांव में निवास करने वाले छोटे छोटे किसानों को साख की अत्यन्त आवश्यकता थी। इटली के ग्रामों की आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं है, किसान निर्धन हैं, लगान अधिक है, भूमि की कमी है और खेती-बारी भी अधिक उन्नत नहीं है; इसका फल यह है कि छोटे किसान अधिकतर क़र्ज़दार हैं और महाजन उनका शोषण करते हैं।

डाक्टर वोलैम्बर्ग का हृदय गांवों की इस आर्थिक शोचनीय दशा को देखकर सिहर उठा और उन्होंने रैफ़ीसन सहकारी साख समितियों के ढंग की समितियां स्थापित करके देश की सेवा करने का निश्चय किया। उन्होंने सर्व प्रथम अपने गांव में एक समिति

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

की स्थापना की। प्रारम्भ में तो सदस्य बहुत कम थे और डिपाज़िट भी बहुत ही कम आई, किन्तु डाक्टर अथक परिश्रम से कार्य करते रहे। जब समिति को स्थापित हुए तीन महीने हो गये और समिति के मन्त्री ने सदस्यों को लिखा कि वे १।। प्रति शत सूद, लिए हुये क़र्ज़ पर देजावें तो सदस्यों के आश्चर्य का ठिकाना न रहा। पहिले तो उन्होंने समझा कि लिखने में कुछ भूल होगई है,किन्तु जब उन्हें ज्ञात हुआ कि यह ठीक है तो यह ख़बर बड़ी तेज़ी से समीप के गांवों में फैलगई और धड़ाधड़ समितियां स्थापित होने लगीं।

डाक्टर वोलैम्बग ने अपनी समितियों का संगठन रैफ़ीसन के भांति ही रक्खा, भेद केवल इतना ही है कि इटली की ग्रामीण समिति जर्मनी की समिति से छोटी होती है। प्रत्येक कार्य में किफ़ायत पर अत्याधिक ध्यान दिया जाता है। इन समितियों में सदस्य समिति के कार्य में खूब भाग लेते हैं। प्रत्येक सदस्य जो कि साधारण बैठक में आने के योग्य होता है अवश्य आता है। साधारण बैठक जल्दी जल्दी होती हैं, और जो सदस्य बिना उचित कारण के सम्मिलित नहीं होता, वह और सदस्यों की दृष्टि में गिरजाता है, और उसको नाम मात्र का जुर्माना देना होता है। समिति का संचालन सब सदस्य मिलकर करते हैं। साधारण बैठक प्रबन्धकारिणी समिति के लिये आज्ञा देती है और प्रबन्धकारिणी समिति केवल उन आज्ञाओं का पालन करती है। साधारण बैठक का संचालन में अधिक हाथ रहता है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

तीसरा परिच्छेद

भारतीय ग्रामीण ऋण

भारतवर्ष में लगभग ६० प्रति शत जनता गांवों में निवास करती है और ग्रामीण जन संख्या अधिकतर खेती-बारी पर ही निर्भर रहती है। अधिकतर तो ग्रामीण किसान ही होते हैं और कुछ ग्रामीण उद्योग धन्धों में लगे रहते हैं। किन्तु गांव के धन्धे भी अप्रत्यक्ष रूप से खेती-बारी पर ही निर्भर हैं। यदि हम यह कहें कि समस्त ग्रामीण जन संख्या खेती-बारी पर निर्भर है तो अतिश्योक्ति न होगी। जो मनुष्य कि भारतीय ग्राम्य जीवन से परिचित नहीं है, वह सम्भवतः ग्रामीण जनता के विषय में धोखा खा जावे। जिस देश का अवलम्बन ही खेती-बारी है उस देश में किसानों की अत्यन्त शोचनीय दशा का कौन ध्यान कर सकता है। किन्तु बात उलटी है, आज भारतीय किसान की आर्थिक दशा जितनी पतित है सम्भवतः संसार के अन्य किसी देश के किसानों की नहीं है। भारतीय ग्रामीण आज क़र्ज़ के भयंकर बोझ से बहुत दबा हुआ है और क़र्ज़दार होने के कारण उसका राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक तथा चरित्र-विषयक पतन हो रहा है। यह तो आगे के पृष्ठों में बतलाया जावेगा कि ऋणी होने का कैसा भीषण परिणाम किसान वर्ग को भुगतना पड़ रहा है किन्तु यह निर्विवाद सत्य है कि देश की आर्थिक दशा को सुधारने के लिये इस समस्या को हल करना

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

होगा। जब तक कि देश की जन संख्या का एक बहुत बड़ा भाग आर्थिक दासता का जीवन व्यतीत करता रहेगा तब तक देश की आर्थिक स्थिति को सुधारने का प्रयत्न करना स्वप्न मात्र है।

१९३० में सैन्ट्रल बैंकिंग इनक्वायरी कमेटी के साथ सहयोग करने के लिये प्रत्येक प्रान्तीय सरकार ने प्रान्तीय बैंकिंग इनकायरी कमेटी बैठाई। प्रांतीय बैंकिंग इनकायरी कमेटियों ने अपने अपने प्रान्तों में ग्रामीण ऋण का अनुमान लगाने का प्रयत्न किया है। यद्यपि प्रान्तीय कमेटियों का अनुमान बिलकुल सही नहीं होसकता फिर भी हमें कर्ज की भयंकरता का अनुमान भली भांति होसकता है।

यदि प्रान्तीय कमेटियों के अनुमान किये हुये कर्ज को जोड़ा जावे तो ब्रिटिश भारत का ग्रामीण ऋण ९०० करोड़ रुपया होता है। ध्यान रहे देशी राज्यों के अंक इसमें नहीं जोड़े गये हैं। ऋण का व्यौरा इस प्रकार है:—

प्रान्त	ऋण
असाम	२२ करोड़
बंगाल	१०० ,,
बिहार-उड़ीसा	१५५ ,,
बम्बई	८१ ,,
बर्मा	५०-६० ,,
केन्द्रीय सरकार द्वारा शासित प्रदेश	१८ ,,
मध्य प्रान्त	३६ ,,

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कुर्ग	...	...	३५–५५ लाख
मद्रास	...	...	१५० करोड़
पंजाब	...	...	१३५ ,,
संयुक्त प्रान्त	...	...	१२४ ,,

अभी तक किसी भी कमेटी ने सारे देशी राज्यों के ग्रामीण ऋण को मालूम करने का प्रयत्न नहीं किया। किन्तु जिन्होंने राज्यों का आर्थिक स्थिति का कुछ भी अध्ययन किया है, वे जानते हैं कि देशी राज्यों के ग्रामीणों की आर्थिक दशा ब्रिटिश भारत के ग्रामीणों से कुछ अच्छी नहीं है। यदि हम सारे देशी राज्यों का ग्रामीण ऋण ब्रिटिश भारत का एक तिहाई मानलें तो कुछ भूल न होगी। इस हिसाब से समस्त देश का ग्रामीण ऋण १२०० करोड़ रुपये होता है।

अब प्रश्न यह होता है कि यह कर्ज घट रहा है अथवा बढ़ रहा है। प्रान्तीय कमेटियों की सम्मति में भारतीय ग्रामीण ऋण पिछले १०० वर्षों में बराबर बढ़ता गया है। सर ऐडवर्ड मैकलेगन ने १९११ में कहा था "यह तो स्पष्ट है कि ग्रामीण ऋण भारतवर्ष के लिये कोई नई बात नहीं है, इतिहास को देखने से ज्ञात होता है कि ब्रिटिश शासन के पूर्व भी यह समस्या उपस्थित थी। किन्तु यह भी मानना पड़ेगा कि यह ऋण ब्रिटिश शासन में और विशेषकर पिछले पचास वर्षों में, बहुत बढ़गया है।" शाही कृषि कमीशन की भी इस विषय में लगभग यही सम्मति है। कमीशन का कहना है कि प्रान्तों का ग्रामीण ऋण अवश्य ही

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पिछले वर्षों में बढ़ गया है। पिछले दस वर्षों में तो इस की भयंकरता बहुत ही बढ़गई है। इसका अनुमान केवल अंकों से नहीं किया जासकता। १६२१ के बाद खेती की पैदावार का मूल्य लगभग ५० प्रति शत घटगया। अस्तु, किसानों के कर्ज़ा का बोझ पहले से दुगना होगया है। इस भयंकर बोझ को किसान किस प्रकार संभाल सकेगा यह तो अर्थशास्त्र के विद्यार्थी के लिये भी एक समस्या है।

प्रान्तीय कमेटियों ने यह जानने का भी प्रयत्न किया है कि प्रति शत कितने लोग क़र्ज़दार नहीं हैं। निम्न लिखित चार प्रांतों में ऋण-मुक्त किसानों की संख्या इस प्रकार है:—

आसाम प्रान्त में ६ प्रति शत से लेकर ३८ प्रति शत किसान भिन्न भिन्न ज़िलों में मुक्त हैं।

बिहार उड़ीसा में १६ प्रति शत से लेकर २१ प्रति शत मुक्त हैं।

मध्य प्रान्त में १३ प्रति शत से लेकर ७० प्रति शत मुक्त हैं।

संयुक्त प्रान्त में ३३ प्रति शत से लेकर ६१ प्रति शत मुक्त हैं।

इन अंकों से यह स्पष्ट नहीं होता कि वास्तव में कितने किसान ऋण मुक्त हैं। अर्थशास्त्र के कतिपय विद्वानों का मत है कि लगभग ७५ प्रति शत किसान कर्ज़दार हैं।

प्रान्तीय बैंकिंग इन्कायरी कमेटियों ने विस्तार पूर्वक उन कारणों का विवेचन किया है जो किसान को कर्ज़दार बनाते हैं। ग्रामीण जन संख्या के कर्ज़दार होने के बहुत से कारण हैं।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

किसान का पुराना ऋण उसको कर्जदार बनाने में बहुत सहायक है। किसान पुराने कर्जे को चुकाने के लिये नया कर्जा लेता है। भारतीय किसान को भयंकर सूद देना पड़ता है क्योंकि उसकी आर्थिक दशा अत्यन्त शोचनीय है। दूसरा मुख्य कारण यह है कि भारतीय किसान के पास इतनी भूमि नहीं है कि वह उस पर खेती करके अपने कुटुम्ब का पालन पोषण कर सके। कारण यह है कि देश के अन्य धन्धे विदेशी माल तथा देशी मिलों की प्रतिद्वन्दिता के कारण नष्ट हो गये और उनमें लगी हुई जन संख्या खेती बारी में लग गई। भारतवर्ष में खेती-बारी को भूमि का अकाल पड़ गया और प्रति किसान भूमि कम हो गई। यही नहीं, हिन्दुओं तथा मुसलमानों में पिता के मरने पर सब लड़कों में बराबर बराबर भूमि बांटने की प्रथा के कारण वह थोड़ी भूमि भी छोटे छोटे टुकड़ों में विभाजित होजाती है और एक स्थान पर सारे खेत न होकर खेत मीलों में बिखरे होते हैं, जिसके कारण खेती वैज्ञानिक ढंग से नहीं की जासकती और न इस धन्धे में लाभ ही होसकता है। इस कारण किसान साधारणतया बिना कर्जा लिये अपना काम नहीं चला सकता। इसके अतिरिक्त बैलों की आकस्मिक मृत्यु तथा अनिश्चित खेती भी किसान को कर्जादार बनाती है। भारतवर्ष के किसान के पास पशुधन ही उसकी अत्यन्त मूल्यवान पूँजी है, किन्तु पशुओं की बीमारी इतनी भयंकर हैं और पशुओं की मृत्यु संख्या इतनी अधिक है कि किसान को उससे बहुत हानि होती है और कर्जा लेकर नये

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पशु ख़रीदने पड़ते हैं । भारतवर्ष में खेती अधिकतर वर्षा पर निर्भर है, किन्तु वर्षा यहां अनिश्चित होती है जिसके कारण फ़सल भी अनिश्चित होती है । यदि वर्षा आवश्यकता से बहुत कम हो, अथवा अति वर्षा हो तो फ़सल ख़राब होजाती है। कभी टीड़ीदल नष्ट करदेता है तो कभी कोई हवा अथवा कोड़ा फ़सल को नष्ट कर देता है । जिन वर्षों में फ़सल अच्छी होती है उनमें तो किसान किसी प्रकार अपना काम चला लेता है किन्तु फ़सल खराब होने पर तो उसको कर्ज़ ही लेना पड़ता है । कुछ अर्थशास्त्रज्ञों का मत है कि किसान विवाह, मृत्यु संस्कार, तथा अन्य सामाजिक कृत्यों में अपनी स्थिति को देखते बहुत अधिक व्यय कर देता है और उसे कर्ज़ लेना पड़ता है । हो सकता है कि इस में कुछ सत्य हो किन्तु इसमें अतिशयोक्ति की मात्रा अधिक है । कुछ प्रान्तीय बैंकिंग इनक्वायरी कमेटियों की भी इस विषय में यही सम्मति है । हां, जिस वर्ष फ़सल अच्छी होतीहै और किसान को कुछ अधिक रुपया मिलजाता है, तब बैंक इत्यादि न होने के कारण वह उसे सामाजिक तथा अन्य धार्मिक कार्यों पर ख़र्च कर डालता है । लेखक के मतानुसार मुक़द्दमेबाज़ी भी किसान के कर्ज़दार होने का एक मुख्य कारण है। किसान मुक़द्दमेबाज़ी में फंसकर कर्ज़दार बनजाता है । जो लोग भारतीय अदालतों से परिचित हैं वे जानते हैं कि किसान भूखे रहकर भी कर्ज़ लेकर मुक़द्दमे में व्यय कर देता है; मुक़द्दमेबाज़ी भारतीय किसान का जातीय खेल है वह उसमें अंधाधुन्ध धन फूँकता है ।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

इनके अतिरिक्त लगान और मालगुज़ारी* भी किसान के कर्ज़दार होने का एक मुख्य कारण है। सरकार तथा सरकारी वेतन-भोगी अर्थशास्त्र के विद्वान इस बात को मानने के लिये तैयार नहीं हैं कि लगान और मालगुज़ारी अधिक है। किन्तु लेखक का तथा अन्य बहुत से विद्वानों का मत यह है कि लगान तथा मालगुज़ारी उचित से अधिक है, क्योंकि खेती-बारी में लाभ बहुत कम है। लगान व मालगुज़ारी अधिक है अथवा कम, इस विषय में मतभेद है किन्तु इसमें तनिक भी सन्देह नहीं कि तीस वर्ष के लिये लगान और मालगुज़ारी पहले से निश्चित कर देने के कारण, जब कभी फ़सलें नष्ट होजाती हैं अथवा खेती की पैदावार की क़ीमत बहुत गिरजाती है तो किसानों को लगान या मालगुज़ारी देना कठिन होजाता है। यद्यपि ऐसे समय में छूट देने का प्रयत्न किया जाता है किंतु वह आवश्यकता से बहुत कम होती है। निर्धन किसान को कर्ज़ा लेकर मालगुज़ारी या लगान देना पड़ता है, क्योंकि ज़मींदार तथा सरकारी कर्मचारी उसे बड़ी सख्ती से वसूल करते हैं। यह तो पूर्व ही कहा जाचुका है कि खेती में लगे

---

* ज़मींदारी प्रथा वाले प्रांतों में किसान भूमि के उपयोग के लिये जो रक़म ज़मींदार को देता है वह लगान कहलाती है, और सरकार जो रक़म ज़मींदार से लेता है उसे मालगुज़ारी कहते हैं।

रैयतवारी प्रान्तों में किसान का सीधा सम्बन्ध सरकार से होता है और वह जो रक़म सरकार को देता है, उसे मालगुज़ारी कहते हैं। मालगुज़ारी, बन्दोवस्त करके सरकार ३० बर्ष के लिये निश्चित करती है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

हुए मनुष्यों की संख्या आवश्यकता से अधिक है, इस कारण खेती के योग्य भूमि का गांवों में अकाल है। अस्तु, किसान भूमि लेने के लिये लम्बे पट्टे लेता है और उचित से अधिक लगान देता है। कभी कभी कर्ज लेकर वह भूमि भी मोल लेलेता है। कहीं कहीं इन दो कारणों से भी वह क़र्ज़दार बना हुआ है। इन सब कारणों के होते हुए तथा महाजन के कर्ज़ देने के ढंग और भयंकर सूद को देखते हुए यह आश्चर्य की बात नहीं है कि किसान सदा क़र्ज़दार रहता है। किन्तु इन सब कारणों के अतिरिक्त एक कारण जिसके विषय में ऊपर के पृष्ठों में संकेत किया जा चुका है, मुख्य है; अर्थात् खेती में लगी हुई जन संख्या की वृद्धि। १८६१ की मनुष्य गणना में ६१ प्रति शत मनुष्य खेती-बारी में लगे हुए थे, यही संख्या १६०१ में ६६ प्रति शत, १६११ में ७१ प्रति शत, १६२१ में ७२ प्रति शत, तथा १६३१ में ७३ प्रति शत होगई। ग्रामीण उद्योग-धन्धों का नष्ट हो जाना भी इस बढ़ी हुई क़र्ज़दारी का एक कारण है।

इस बढ़ी हुई क़र्ज़दारी का फल बहुत भयंकर हो रहा है। किसान और कारीगर महाजन के क्रीत-दास बन गये हैं। वर्ष भर परिश्रम करने के उपरान्त भी उनको भर पेट भोजन नहीं मिलता, एक बार क़र्ज़ा ले लेने पर वह लोग महाजन के चँगुल से बचकर कभी निकल ही नहीं सकते। महाजन उनका दोहन करके आनन्द करता है, और निर्धन किसान परिश्रम करता है महाजन के लाभ के लिये। किसान किसी प्रकार अपनी आवश्यकताओं

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

को घटा कर गुज़ारा करता है। किसी वर्ष भी यदि फ़सल नष्ट होगई तो उसे महाजन की शरण जाना पड़ता है, और एक बार वह महाजन के पास गया नहीं कि चिर-दास बना नहीं।

क़र्ज़ लेना कोई बुरी बात नहीं है और न क़र्ज़दार होना ही आर्थिक-हीनता का सूचक है, यदि कर्ज़ उत्पादक कार्य के लिये लिया गया हो; किन्तु अनुत्पादक कार्य के लिये लिया हुआ कर्ज़ किसान की आर्थिक मृत्यु का कारण होता है। भारतीय किसान का ऋण अधिकतर अनुत्पादक कार्यों के लिये लिया गया है और जो ऋण उत्पादक कार्यों के लिये भी लिया जाता है, उस पर इतना अधिक सूद देना पड़ता है कि किसान दिवालिया हो जाता है। किसान को इतना अधिक सूद देना पड़ता है कि खेती बारी में उसे लाभ हो ही नहीं सकता। भारतवर्ष के प्रत्येक प्रान्त में सूद की दर भिन्न भिन्न है,परन्तु २० प्रति शत से ले कर ३७ प्रति शत तक साधारण सूद की दर है। किन्तु कहीं कहीं ५० प्रति शत से लेकर १०० प्रति शत तक सूद देना पड़ता है। भारतीय अदालतों में ऐसे बहुत से मुक़दमे आये जिनमें सूद की दर १००० प्रति शत से भी अधिक थी। कभी कभी चतुर महाजन जितनी रक़म देता है उससे कई गुनी लिख लेता है और अशिक्षित किसान उस पर अंगूठा लगा देता है। महाजन किसान से मूलधन तो नहीं मांगता और सूद लेता रहता है। महाजन का सूद निकालना ही किसान के लिये कठिन हो जाता है, मूलधन की तो बात ही क्या। फल यह होता है किसान सदा के लिये क़र्ज़दार बन जाता

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

है और वर्ष भर परिश्रम करके महाजन की थैलियां भरता रहता है। किसी ने ठीक ही कहा है कि भारतीय किसान ऋणी जन्म लेता है, ऋणी ही मरता है और ऋण को भावी पीढ़ियों के लिये छोड़ जाता है। यह ऋण पीढ़ी दर पीढ़ी चलता है। क्रमशः भारतीय किसान के हृदय में यह बात बैठ गई है कि क़र्जदार होना अवश्यम्भावी है, इससे छुटकारा हो नहीं सकता और महाजन को अपने वर्ष भर के परिश्रम द्वारा उत्पन्न की हुई पैदावार सूद में देना अनिवार्य है। अस्तु, वह मुक्त होने का प्रयत्न करना भी छोड़ देता है। भारतीय किसान की मनोदशा इतनी दयनीय हो गई है कि आप चाहे कितना ही उसको समझावें उसकी समझ में यह आही नहीं सकता कि मैं इससे मुक्त भी हो सकता हूँ। जिस प्रकार जीवन होते हुए मरण अनिवार्य है वैसे ही भारतीय ग्रामीण के लिये क़र्ज़दार होना अनिवार्य है। यह उसका दृढ़ विश्वास है। फल यह होता है कि जब कभी सामाजिक रूढ़ियों तथा बिरादरी के दबाव के कारण उसको सामाजिक कार्यों में धन व्यय करना पड़ता है तो वह निश्चिन्त होकर और क़र्ज़ ले लेता है। वह जानता है कि क़र्ज़दार तो अवश्य रहूँगा फिर थोड़े से अधिक खर्चे के लिये बिरादरी से हँसी क्यों करवाऊँ। क़र्ज़दार होने के कारण भारतीय किसान तथा गृह उद्योग-धन्धों में लगे हुए कारीगर इतने हताश हो चुके हैं कि यदि आप किसान को वैज्ञानिक ढंग से खेती करके अधिक पैदावार प्राप्त करने का आदेश दें तो वह कदापि मानने को तैयार नहीं

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

होता, क्योंकि वह जानता है कि यदि अच्छा बीज, खाद और यन्त्रों का उपयोग करके मैंने अधिक पैदावार की भी तो वह महाजन के पास जावेगी; मैं तो जैसा पहले था वैसा फिर भी रहूँगा, मैं क्यों व्यर्थ में परिश्रम करूं। यदि हम चाहते हैं कि कृषि की उन्नति हो और भारतीय ग्रामीणों की आर्थिक दशा सुधरे तो हमें उनको इस भयंकर बोझ से मुक्त करना होगा। जब तक भारतीय किसान इस भयंकर बोझ से पिसा जारहा है तब तक देश की आर्थिक दशा का सुधारना स्वप्न-तुल्य है; केवल एक सुन्दर कल्पना है, इसमें तथ्य कुछ भी नहीं है।

किसान फ़सल बोने के समय महाजन से सवाये अथवा डयोढ़े पर बीज लाता है तथा खाद इत्यादि डालने के लिये कर्ज़ा लेता है। फ़सल तैयार होनेपर अधिकतर उसे अपनी फ़सल शीघ्र ही बेच देना पड़ती है क्योंकि ज़मींदार लगान के लिये, सरकार आबपाशी के लिये, तथा महाजन अपने कर्ज़ के लिये जल्दी मचाते हैं। उस समय किसान महाजन के हाथ फ़सल बेचकर अपना पीछा छुड़ाता है। महाजन बाज़ार भाव से बहुत सस्ते दामों पर फ़सल मोल लेता है। कभी कभी तो कर्ज़ा देने के समय यह निश्चय होजाता है कि किसान फ़सल महाजन के ही हाथ बेचेगा। यदि कोई किसान समीपवर्ती मंडी में फ़सल बेचने जाता है तो वहां दलाल, आढ़तिया तथा व्यापारी उसको लूटते हैं। साथ ही फ़सल कटने के थोड़े दिनों के बाद तक बाज़ार का भाव बहुत मन्दा रहता है और किसान को मन्दे भाव पर अपनी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

फ़सल बेच देना पड़ती है। जूट, गन्ने तथा अन्य औद्योगिक कच्चे माल के किसान तो खड़सारियों तथा जूट के व्यवसायियों के चिरदास बने रहते हैं। खड़सारी फ़सल बोने के समय कुछ रुपया किसान को पेशगी देदेता है और उससे तय करलेता है कि इस क़ीमत पर तुम्हें गन्ना अथवा रस हमें देना होगा; गन्ने अथवा रस का मूल्य सालभर पहिले से ही निश्चित होजाता है। निर्धन किसान को गन्ने की फ़सल बोने के लिये रुपया चाहिये और उसे खड़सारियों से रुपया लेना ही पड़ता है। वास्तव में स्थिति तो यह है कि परिश्रम करता है किसान और उसका लाभ उठाते हैं महाजन। अधिकतर किसानों की स्थिति यह है कि फ़सल काट चुकने के उपरान्त, ज़मींदार सरकार तथा महाजन का देना चुकाने पर उसके पास कठिनता से आठ महीने का भोजन बच रहता है। पिछले चार महीनों के लिये उसे महाजन से सवाये डयोढ़े पर अनाज उधार लेना पड़ता है। कहीं कहीं तो कर्ज़दारों की स्थिति मोल लिये हुए दासों से भी गई बीती हो जाती है। बिहार उड़ीसा के छोटा नागपुर प्रान्त में कम्यौती पद्धति प्रचलित है। ज़मींदार किसी मज़दूर को कुछ रुपया (१०० या २००) देदेता है, इस रुपये पर न तो सूद लिया जाता है और न यह रुपया वापिस किया जाता है। किन्तु इसके बदले कम्यौत को इक़रारनामा लिखना पड़ता है कि वह जब ज़मींदार को आवश्यकता होगी तब उसका काम करेगा। ज़मींदार को फ़सल बोने तथा काटने के समय कम्यौत की आवश्यकता पड़ती है, तब

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

वह उसे बुला लेता है और दो आना प्रति दिन के हिसाब से मज़दूरी देदेता है। गांवों में यही समय मज़दूरी का होता है। इन महीनों को छोड़कर और महीनों में कम्यौत को गांव में मज़दूरी नहीं मिल सकती। ठीक इन्हीं दिनों ज़मींदार भी कम्यौत को अपने यहां नहीं रखता। उन दिनों कम्यौत को वे दो आने भी नहीं मिलते। कम्यौत जीवनभर इस दासता में रहता है क्योंकि जब तक वह लिया हुआ रुपया न लौटा दे तब तक उसका इस बन्धन से छुटकारा नहीं होता। कुछ वर्ष हुये बिहार सरकार ने एक एक्ट बनाकर इस प्रकार के इक़रारनामों को ग़ैर-क़ानूनी घोषित कर दिया, किन्तु अशिक्षित कम्यौत को इसका ज्ञान धीरे धीरे होगा।

इसी प्रकार कारीगर भी व्यापारियों और महाजनों के चंगुल में फंसे हुए हैं, और महाजन उनका शोषण कर रहे हैं। बुनकरों का ही धंधा ले लीजिये। निर्धन बुनकर कपड़े तथा दरी के व्यापारी से सूत उधार लाता है तथा कर्घे इत्यादि आवश्यक वस्तुओं के लिये भी रुपया लेता है। कपड़े का व्यापारी सूत का भी व्यापारी होता है। वह सूत का मूल्य अधिक लेता है। बुनकर को तैयार माल उसी व्यापारी के हाथ बेचना पड़ता है। कहीं कहीं व्यापारी बुनकरों को कुछ रुपया एक साथ देदेता है जिसे बाक़ी कहते हैं। बुनकर को उसके बदले उसी व्यापारी से सूत ख़रीदना पड़ता है और उसी व्यापारी के हाथ तैयार माल बेचना होता है। व्यापारी सूत का अधिक दाम लेकर तथा तैयार माल

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

का कम मूल्य देकर बुनकर को लूटता है। जब तक कि बुनकर बाक़ी का रुपया न चुका दे तब तक वह दूसरे व्यापारी के पास नहीं जासकता। इस प्रकार महाजन कारीगरों का शोषण करते हैं। जब तक कि पूँजी के उचित मूल्य पर मिलने का तथा तैयार माल के बिकने का प्रबन्ध सहकारी समितियों के द्वारा नहीं किया जाता तब तक गृह उद्योग-धन्धे पनप नहीं सकते।

यह तो पहले ही कहा जा चुका है कि साहूकार की ऋण देने की पद्धति तथा सूद की दर इतनी भयंकर है कि किसान कभी मुक्त नहीं हो सकता। भिन्न भिन्न प्रान्तीय बैंकिंग इनक्वायरी कमेटियों ने अपने अपने प्रान्तों में जो सूद की दर लिखी है वह इस प्रकार है:—

आसाम—१२ प्रति शत से ७५ प्रति शत तक।

बम्बई—१२ " ५० "

बंगाल—कम से कम १० से ३७½ तक, अधिक से अधिक ३७½ से ३०० तक।

विहार उड़ीसा—१८¾ से ५० प्रति शत तक।

बर्मा—१८ से २४ प्रति शत तक। छोटे तथा बिना ज़मानत के क़र्ज़ों पर ३८ से ६० प्रति शत तक।

मध्य प्रान्त—१२ से ३७½ प्रति शत तक। अनाज के ऋण पर २५ से १०० प्रति शत तक।

मदरास—१२ से लेकर ४८ प्रति शत तक।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

संयुक्त प्रान्त—व्यापारिक कार्यों के लिये ६$\frac{१}{३}$ से १२$\frac{१}{३}$ तक, तथा अनाज के कर्ज़ा पर २५ प्रति शत से ५० प्रति शत तक।

पंजाब कमेटी ने केवल उन ऋणों के सूद की दर बतलाई है जिनके लिये कुछ सम्पत्ति बंधक रूप में रख दी गई है। वह सूद की दर ६ से १२ तक है।

क्रमशः इस भीषण ऋण के बोझ को न सह सकने के कारण किसानों की भूमि उनके हाथ से निकल कर महाजनों के हाथों में जाने लगी। इस भयंकर परिस्थित की ओर भारत सरकार का ध्यान किसान विद्रोह ने आकर्षित किया। दक्षिण भारत, अजमेर-मेरवाड़ा तथा मध्य प्रान्त के छोटा-नागपुर डिविज़न में किसान विद्रोही हो उठे, उन्होंने महाजनों के घर जला दिये और उन्हें मार डाला, तथा बही खातों को जला कर भस्म कर दिया। सरकार ने एक कमीशन दक्षिण के किसानों के विद्रोह के कारणों की जांच करने के लिये बिठाया। कमीशन की सम्मति में किसानों की गिरी हुई आर्थिक दशा और भयंकर सूद की दर ही इन विद्रोहों का कारण थी। शान्ति-प्रिय किसान जब महाजन का अत्याचार न सह सके तो वह विद्रोही हो उठे। सरकार ने किसान की रक्षा के लिये एक एक्ट बनाया जिससे अदालतों को यह अधिकार देदिया गया कि वे किसी भी नालिश के मुक़द्दमे में न्यायोचित सूद की ही डिगरी दें, फिर किसान ने महाजन को चाहे जितना अधिक सूद देने का इक़रार क्यों न किया हो। किंतु

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

इस एक्ट का कोई फल न हुआ, क्यों कि किसान निर्धन हैं और न्यायालयों में व्यय अधिक होता है, साथ ही अदालतों ने इस ओर विशेष ध्यान भी नहीं दिया। सरकार ने फ़सलों के नष्ट होने पर मालगुज़ारी तथा लगान में छूट करने की नीति को अपनाया, किंतु इससे भी किसान को कुछ विशेष लाभ नहीं हुआ। सरकार एक तो छूट बहुत कम करती है और उस छूट में भी यह शर्त लगाई जाती है कि यदि किसान एक निश्चित तारीख़ तक लगान नहीं दे देगा तो छूट नहीं मिलेगी। फल यह होता है कि क़िसान को महाजन से क़र्ज़ लेकर लगान देना पड़ता है। भारतीय सरकार का ध्यान इस ओर आकर्षित किया गया कि भारतीय क़िसानों में मितव्ययिता का भाव जागृत करना चाहिये। अस्तु, पोस्ट आफ़िस सेविंग बैंक खोले गये। किंतु इन बैंकों ने किसानों में मितव्ययिता का कितना प्रचार किया है यह पाठक भली भांति जानते हैं। अशिक्षित किसान भला उन पोस्ट आफ़िस सेविंग बैंकों से कैसे लाभ उठा सकता है जिनका कार्य विदेशी भाषा में होता है और जो अधिकतर शहरों और बड़े क़स्बों में होते हैं। जिस देश में क़िसानों को मनीआर्डर और तार की लिखाई दो आने और ख़त की लिखाई एक आना देनी पड़ती हो, वहां भला पोस्ट आफ़िस सेविंग बैंक किस प्रकार किसानों को अपनी ओर आकर्षित कर सकते हैं। सरकार ने कई बार क़ानून में सुधार इस दृष्टि से किये कि किसान को कुछ सुविधा दीजावे किंतु क़ानूनों के द्वारा सरकार किसानों को कुछ भी सहायता न पहुंचा सकी।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सरकार ने देखा कि किसान को खेती बारी का धंधा करने के लिये साख की आवश्यकता होती है। किसान को दो प्रकार की साख चाहिये अर्थात् थोड़े समय के लिये तथा अधिक समय के लिये। किसान को फ़सल तैयार करने के लिये जो क़र्ज़ा लेना पड़ता है वह लगभग एक वर्ष के लिये लिया जाता है। फ़सल के लिये किसान को बीज, खाद, हल तथा अन्य औज़ारों और मज़दूरों की मज़दूरी का प्रबन्ध करना पड़ता है । किसान इनके लिये क़र्ज़ा लेकर फ़सल कटने के उपरान्त अदा कर सकता है। किन्तु कुछ काय ऐसे हैं जिन में पूँजी लगाने से तुरन्त ही लाभ नहीं होता जैसे कुआ खोदना, खेती के मूल्यवान यन्त्र मोल लेना,तथा भूमि को अधिक उपजाऊ बनाना इत्यादि। इन कार्यों के लिये क़र्ज़ा अधिक समय के लिये चाहिये। अस्तु, सरकार ने दो एक्ट बनाकर प्रान्तीय सरकारों को यह अधिकार दे दिया कि वे किसान की दोनों प्रकार की आवश्यकताएं पूरी करने के लिये कर्ज़ा देसकती हैं। इस सरकारी क़र्ज़ा को तक़ावी कहते हैं किन्तु तक़ावी से भी यह समस्या हल नहीं हुई और न किसानों ने तक़ावी का अधिक उपयोग ही किया। कारण यह है कि एक तो किसान को समय पर रुपया नहीं मिलता, उसको रुपये की इस समय आवश्यकता है किन्तु रुपया मिलता है देर में। इसमें सबसे बड़ा दोष यह है कि किसानों को तक़ावी पटवारी, क़ानूनगो, तथा नायब तहसीलदार इत्यादि रैवन्यूविभाग के कर्मचारियों की सिफ़ारिश से ही मिलती है। इस कारण किसान को तक़ावी मिलने में कठिनाई

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

होती है। आवश्यकतानुसार तक़ावी मिलने में कठिनाई होने से तथा वसूलयाबी में कड़ाई होने के कारण तक़ावी का अधिक प्रचार न होसका।

कर्ज़दार होने के कारण किसानों के हाथ से भूमि महाजनों के पास चली जाती है और किसान उस पर मज़दूर की भांति काम करता है। पंजाब में इस समस्या ने भीषण रूप धारण कर लिया था, इस कारण वहां एक एक्ट बना कर इसको रोक दिया गया। 'पंजाब लैंड एलीनियेशन एक्ट' के अनुसार कुछ जातियां किसान जातियां मान ली गईं हैं और खेती की भूमि इन जातियों के अतिरिक्त अन्य जातियां नहीं ले सकतीं। इस एक्ट से यह लाभ हुआ कि महाजन कर्ज़ा के लिये डिगरी करा कर अब किसान की भूमि नहीं ले सकते। संयुक्तप्रान्त के बुन्देलखण्ड नामक प्रदेश में, तथा मध्यप्रान्त के कुछ भागों में इसी प्रकार का क़ानून लागू किया गया है।

किन्तु ऋण समस्या जैसी पहले थी वैसी ही बनी रही। इसी बीच में भारत सरकार का ध्यान सहकारिता आन्दोलन की ओर आकर्षित हुआ और सहकारिता आन्दोलन का श्रीगणेश सरकार के द्वारा भारतवर्ष में किया गया। जर्मनी और इटली में सहकारी साख समितियों ने वहां के किसानों की आर्थिक स्थिति सुधारने में आश्चर्यजनक सफलता प्राप्त की थी। भारत सरकार ने भी ऋण की समस्या हल करने के लिये सहकारिता आन्दोलन की शरण ली।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

इस देश में तीस वर्षों से ऊपर इस आन्दोलन को चलते हो गये। सहकारिता आन्दोलन कहां तक सफल हुआ है और भविष्य में उससे क्या आशा है यह तो आगे के पृष्ठों में लिखा जायगा किन्तु इन तीस वर्षों के अनुभव से यह तो स्पष्ट ही हो गया है कि किसानों का पिछला कर्ज़ा चुकाने तथा अधिक समय के लिये किसान को कर्ज़ा देने का कार्य सहकारी साख समितियां सफलता पूर्वक नहीं कर सकतीं। और जब तक किसान पुराने कर्ज़ा के बोझ से दबा रहेगा तब तक उसकी आर्थिक उन्नति नहीं हो सकती। यदि किसान सहकारी साख समिति का सदस्य बनता है किन्तु महाजन का पुराना कर्ज़ा नहीं चुका सकता तो महाजन उसको तंग करता है और किसान को पुराने कर्ज़ा पर तो भयंकर सूद देना ही पड़ता है। फल यह होता है कि किसान की मुक्ति का कोई उपाय नहीं रहता। इसी समस्या को हल करने लिये भूमि बंधक बैंक (Land Mortgage Banks) स्थापित करने का आयोजन किया जारहा है। यह बैंक भी उन्हीं किसानों का पिछला कर्ज़ा चुका सकेंगे जिनके पास भूमि है और जो उसे बैंक के पास बंधक स्वरूप रख सकेंगे। बैंक किसान से सूद सहित उस कर्ज़ा को बीस अथवा पचीस वर्षों में किश्तें लेकर वसूल कर लेगा। यह प्रयोग अभी नया है, बहुत कम बैंक देश में स्थापित किये गये हैं, इस कारण इनकी सफलता के विषय में कुछ नहीं कहा जा सकता। किन्तु इतना तो स्पष्ट है कि भूमि बंधक बैंक को कार्य-शील पूँजी (Working Capital)

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

इकट्ठा करने की समस्या हल करनी होगी और यदि इन बैंकों के डिबैंचर बेंच कर कार्यशील पूँजी इकट्ठी भी हो गई तो भी यह बैंक उन्ही किसानों को कर्ज़ा दे सकेंगे कि जो भूमि को बंधक रख सकेंगे। बहुत से प्रान्तों में किसान का भूमि पर स्वामित्व ही नहीं है, वहां यह बैंक किसानों की सहायता न कर सकेंगे।

ऋण परिशोध—यह तो पहले ही कहा जा चुका है कि पुराने कर्ज़ा को चुकाने की समस्या बहुत कठिन है। अधिकतर यह ऋण पैतृक होता है, यह एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी पर आता है। किसान की आर्थिक स्थिति इतनी शोचनीय हो गई है कि वह इस कर्ज़ा को चुका ही नहीं सकता। जब साधारण रूप से फ़सल अच्छी होती है तब भी खेती-बारी का ख़र्चा काटकर, फ़सल तैयार करने के लिये महाजन अथवा सहकारी साख समिति से लिये हुए क़र्ज़ को देकर उसके पास वर्ष भर के लिये खाने को नहीं रहता, तब वह किस प्रकार पुराने कर्ज़ को चुका सकता है। जिस वर्ष फ़सल ख़राब हो जाती है, बैल मर जाते हैं, अथवा और कोई अनिवार्य ख़र्च आ जाता है, तो ऋण अधिक बढ़ जाता है। जब तक पुराने कर्ज़ को चुका नहीं दिया जाता अथवा इसको ग़ैर-क़ानूनी नहीं बना दिया जाता, तब तक किसानों की आर्थिक स्थिति सुधर नहीं सकती। शाही कृषि कमीशन ने अपनी रिपोर्ट में इस विषय पर लिखा है कि इस ऋण की ओर से उदासीन रहना बहुत भयंकर होगा।

सैंट्रल बैंकिंग इनकायरी कमेटी की सम्मति में सरकार को

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

इस ओर ध्यान देना चाहिये और निम्नलिखित योजना के अनुसार कार्य करना चाहिये :—

प्रान्तीय सरकार इस कार्य के लिये विशेष कर्मचारी नियुक्त करे जो कि गांवों में दौरा करके महाराज को इस बात पर राज़ी करें कि वह किसानों से एक मुश्त अथवा क़िश्तों में रुपया लेकर उन्हें ऋण-मुक्त करदे। इन कर्मचारियों का यह भी कर्तव्य होगा कि वे किसानों को यह बतलावें कि क़ानून द्वारा निश्चित सूद की दर को घटवाया जा सकता है।

जब कर्मचारी महाजन से तय करले कि वह कम से कम कितना रुपया लेकर किसान को ऋण मुक्त कर देगा तब किसान को सहकारी साख समिति का सदस्य बनवा दिया जावे। समिति उसका कर्ज़ा इकठ्ठा अथवा किश्तों में चुका दे तथा खेती-बारी के लिये किसान को आवश्यक साख दे।

जब महाजन रुपया वार्षिक किश्तों में लेना स्वीकार करे तो जितना किसान स्वयं अदा कर सकता हो, करदे, और बाक़ी का ऋण समिति, सदस्य की जमा के रूप में, अपने यहां लिख लेगी और प्रति वर्ष जब किश्त का रुपया अदा करेगी तो जमा किया हुआ रुपया कम कर दिया जावेगा।

यदि महाजन एक मुश्त रुपया मांगे तो सरकार को उतना रुपया समिति को उधार देदेना चाहिये; समिति उस कर्ज़ा को वार्षिक क़िश्तों में चुका देगी। तदुपरांत यह निश्चय किया

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

जावेगा कि किसान प्रति वर्ष कितनी किश्त अदा करे। यदि किसान रुपया अदा न कर सके और समिति को हानि हो जावे तो सरकार उस हानि को पूरा करदे।

यह भी सम्भव है कि महाजन कर्ज़ा के इस प्रकार चुकाये जाने के लिये तैयार न हों और समझौता न करें। ऐसी परिस्थिति में उन्हें क़ानून बना कर समझौते के लिये वाधित किया जावे।

शाही कृषि कमीशन ने भी पैतृक ऋण के विषय पर अपनी सम्मति दी है। कमीशन की सम्मति में ग्रामीण 'इन्सालवैंसी (दिवाला) ऐक्ट' बनाया जावे। इससे यह लाभ होगा कि जो ग्रामीण ऋण के बोझ से इतना दबा हो कि उसकी सम्पत्ति के बिक जाने पर भी वह कर्ज़ अदा न कर सके तो वह दिवालिया होने का प्रार्थना पत्र देदे और अपनी सम्पत्ति लेनदारों को देकर ऋण मुक्त हो जावे, और स्वतन्त्र रूप से आजीविका उपार्जन करे। चाहे उसकी सम्पत्ति से लेनदारों का आधा रुपया भी वसूल न हो सके, वे उस किसान से रुपया भविष्य में वसूल नहीं कर सकते। किसान सदा के लिये उस ऋण से मुक्त हो जावेगा। यह ऐक्ट पास हो गया है।

लेखक का मत—यदि देखा जावे तो यह सभी योजनाएं त्रुटिपूर्ण हैं। किसान को ऋण मुक्त करने की समस्या ने आज पचास वर्षों से सरकार तथा जनता का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करलिया है। बहुतसी योजनाएं तैयार की गई, उनके अनुसार कार्य भी किया गया, किन्तु किसी से भी सफलता प्राप्त नहीं

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

हुई। सफलता प्राप्त न होने का एक कारण यह है कि किसी भी विद्वान ने इस समस्या पर स्वतन्त्र रूप से विचार नहीं किया।

यह तो पहले कहा जाचुका है कि जन संख्या के बढ़जाने से तथा गृह उद्योग-धन्धों के नष्ट होजाने से खेती बारी करने वालों की संख्या पिछले पचास वर्षों में बहुत बढ़ गई है । इस कारण प्रति किसान,भूमि बहुत कम रहगई है। भूमि का अकाल पड़गया है। किसान को बहुत अधिक लगान देकर भूमि लेनी पड़ती है। किसान के सारे खेत एक ही स्थान पर नहीं होते, भूमि के छोटे छोटे टुकड़े दूर दूर बिखरे होते हैं जिसके कारण व्यय अधिक, और पैदावार कम होती है । साधारणतः जब फ़सल अच्छी होती है तो भी किसान को वर्षभर के लिये खेती से यथेष्ट आय नहीं होती। फिर,हर तीसरे अथवा चौथे साल फ़सल नष्ट हो जाती है। उपर से धार्मिक, सामाजिक कार्यों के लिये तथा मुक़-दमेबाज़ी के लिये उसे ऋण लेना अनिवार्य होजाता है । वह ऋणी तो होता ही है;फ़सल के वास्ते,लिये हुए ऋण पर सूद तथा मूल चुकाने के अतिरिक्त उसे पुराने ऋण पर भयंकर सूद देना पड़ता है। परिस्थिति ऐसी बन गई है कि किसान को यह दृढ़ विश्वास होगया है कि वह कभी ऋण मुक्त नहीं हो सकता, और न उसकी भावी पीढ़ियां ही मुक्त हो सकती हैं। वह तो कहता है यह कर्ज़ा तो ऐसे ही चला आया है और ऐसे ही चलता रहेगा। उसको मनोदशा निराशामय है। वह स्वप्न में भी ध्यान नहीं करता कि मैं कभी मुक्त हो सकता हूँ। यही कारण है कि उसमें मित-

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

व्ययिता का भाव जागृत नहीं होता, वह सोचता है कि क़र्ज़दार तो रहना ही है फिर किफ़ायत करने की चिन्ता क्यों !

यह समस्या तभी हल हो सकती है कि जब राज्य क़ानून बना कर किसान को ऋण मुक्त करदे। यह मानी हुई बात है कि जब तक क़र्ज़दारी की समस्या हल नहीं होगी तब तक ग्रामीण सुधार होना असम्भव है। आज तक जितनी भी योजनाएं सोची गईं उनमें कोई योजना ऐसी नहीं जो किसान को ऋण-मुक्त कर सके। प्रत्येक योजना किसान को ऋण चुकाने में सुविधाएं प्रदान करती है। सुविधाओं की आवश्यकता तो तब होती है जब कि देनदार में ऋण चुकाने की ताक़त हो। जहां चुकाने की ताक़त हो नहीं है, वहां सुविधाओं से क्या लाभ ! भला विचारिये तो सही कि जो किसान वर्ष भर परिश्रम करने के उपरान्त केवल आठ महीने का भोजन पाता हो, वस्त्र, औषधि तथा शिक्षा पर कुछ व्यय न कर सकता हो, वह किस प्रकार पुराने ऋण को अदा कर सकता है।

यदि हम चाहते हैं कि भारतीय किसान महाजनों की आर्थिक दासता से स्वतंत्र होकर अपने धंधे में उत्साह पूर्वक लग कर खेती-बारी की उन्नति करे, ग्रामीण उद्योग धन्धों की सहायता से अपनी आय को बढ़ावे, और मनुष्यों का सा जीवन व्यतीत करे तो उसे ऋण मुक्त करना होगा। इसके लिये एक क़ानून बना कर सारा ग्रामीण ऋण ग़ैर-क़ानूनी बना दिया जावे; किसान महाजन का देनदार न रहे और ऋण मुक्त हो जावे। जब एक

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

बार किसान मुक्त होकर स्वतंत्र वायु मण्डल में सांस लेगा तब उसकी मनोदशा में परिवर्तन होगा। उसका जीवन निराशामय न होकर आशामय बनेगा। खेती-बारी के लिये आवश्यक साख प्रति वर्ष सहकारी समितियों से मिल जावेगी, फिर वह कृषि विभाग द्वारा बतलाई हुई वैज्ञानिक ढंग की खेती करेगा और ख़राब सालों के लिये, अच्छे सालों में कुछ रुपया बचाकर रखने की भी बात उसकी समझ में आजावेगी। ग्रामीण उद्योग धंधे तभी पनप सकेंगे और किसान को अपनी फ़सल महाजन के हाथ कम दामों पर बेचने के लिये विवश नहीं होना पड़ेगा। सच बात तो यह है कि सहकारिता आन्दोलन तभी सफल होगा और ग्राम संगठन का कार्य तभी सम्भव हो सकेगा।

यदि आप किसान के पैतृक ऋण का इतिहास जानने का प्रयत्न करें तो आपको ज्ञात होजायगा कि उसने अथवा उसके पूर्वजों ने जितना क़र्ज़ा महाजन से लिया था, उसका कई गुना तो वह सूद रूप में देचुका है और मूल का कई गुना उसे देना बाक़ी है। लेखक ने इस विषय की खोज की है जिससे ज्ञात होता है कि अनेक दशाओं में मूल का चार गुना तो किसान सूद में देचुका है फिरभी चार पांच गुना देना बाक़ी है। ऐसे भी उदाहरण मिलते हैं कि जिनमें किसान मूल का दस गुना देचुका है फिर भी, दस गुने से अधिक देना बाक़ी है। हिंदू धर्मशास्त्रों के अनुसार लेनदार क़र्ज़ा लेने वाले से मूल का दुगना ही वसूल कर सकताहै।* दुगने

* मनुस्मृति; दाम दुपत का नियम।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

से अधिक वह किसी भी अवस्था में वसूल नहीं कर सकता, चाहे सूद के हिसाब से रुपया कितना ही क्यों न होगया हो। उदाहरण के लिये यदि किसी किसान ने महाजन से १०० रु० क़र्ज़ लिये और २० प्रति शत सूद ठहरा, और किसान १० वर्ष तक रुपया नहीं देता तो भी महाजन किसान से २०० रु० से अधिक नहीं पासकता। प्राचीन समय में न्यायालय इसी नियम के अनुसार डिगरी दिया करते थे। अब भी कतिपय हिन्दू देशी राज्यों में यह नियम लागू है। जब किसान दुगने से बहुत अधिक दे चुका है फिर यदि उसका क़र्ज़ा ग़ैर-क़ानूनी कर दिया जावे तो कौनसा अन्याय होगा? मुसलमान महाजन देश में बहुत कम हैं और उनके धर्मग्रंथ कुरान के अनुसार तो सूद लेनाही मना है। ऐसी दशा में उनके प्रति भी अन्याय नहीं होगा। सम्भव है कि कुछ नये महाजनों के प्रति इस योजना से अन्याय हो जावे। उन नये महाजनों को राज्य आधा या चौथियाई देकर किसान को ऋण मुक्त करदे। अधिकतर महाजन किसानों को वर्षों से चूस रहे हैं और दिये हुये क़र्ज़ा से कई गुना वसूल करचुके हैं। अबभी उन्हें जो किसानों के दोहन का अधिकार मिला है वह क्या किसान वर्ग पर भीषण अन्याय नहीं होरहा है। फिर, यदि इस भयंकर अन्याय को हटाने से देश की लगभग तीन चौथियाई जन संख्या आर्थिक दासता से मुक्त होती है और राष्ट्र के लिये अधिकाधिक सम्पत्ति उत्पन्न करने का आयोजन हो सकता है तो क्यों न देश इस कार्य को बिना विलम्ब करडाले!

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

चौथा परिच्छेद

सहकारिता आन्दोलन का श्रीगणेश और सहकारिता सम्बन्धी क़ानून

यह तो पिछले परिच्छेद में ही कहा जा चुका है कि १८७८ में बम्बई प्रान्त के पूना तथा अन्य ज़िलों में किसान विद्रोही हो उठे थे। उसके सम्बन्ध में एक जांच कमेटी बिठाई गई थी और उस कमेटी ने विद्रोह का मूल कारण ग्रामीण ऋण बतलाया था। इस पर बम्बई सरकार ने दक्षिण रिलीफ़ ऐक्ट बनाकर किसानों की रक्षा करने का प्रयत्न किया। १८८२ में सर विलियम वैडरबर्न तथा श्री० गोखले ने ग्रामीण ऋण की समस्या को हल करने के लिये कृषि बैंक की एक योजना सरकार के सामने उपस्थित की। योजना मोटे रूप में यह थी कि एक ताल्लुक़ा अथवा ज़िला ले लिया जावे, सरकार उस ज़िले के किसानों का सारा ऋण चुकादे और कृषि बैंक स्थापित करदे; बैंक सरकारी क़र्ज़ा अपने ऊपर लेले और प्रति वर्ष किश्तों में सूद सहित रुपया किसानों से वसूल करे। किन्तु भारत मन्त्री ने इस योजना को अस्वीकार कर दिया क्योंकि योजना व्यवहारिक नहीं थी। इसके उपरान्त १८८३ और १८८४ में तक़ावी ऐक्ट (Land Improvement Loans Act, and Agriculturists Loan Act) पास किये गये, जिनके द्वारा प्रान्तीय सरकारों को उचित सूद पर किसानों को क़र्ज़ देने का अधिकार मिल गया। इसी बीच में दुर्भिक्ष

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कमीशन ने भी किसानों की शोचनीय दशा का वर्णन करते हुए अपनी रिपोर्ट में कृषि बैंक खोलने के विषय में सम्मति देदी। जर्मनी में इसी समय सहकारिता आन्दोलन बड़ी तेज़ी से बढ़ रहा था, मदरास सरकार ने अपने एक कर्मचारी श्री० फ्रैडरिक निकलसन को जर्मनी में सहकारिता आन्दोलन का अध्ययन करने के लिये भेजा। श्री० निकलसन ने वहां की साख समितियों का अध्ययन करने के बाद एक रिपोर्ट लिखी और उसमें यह बतलाया कि किस प्रकार भारत में यह आन्दोलन उपयोगी हो सकता है। श्री निकलसन ने अपनी रिपोर्ट में लिखा है कि यदि भारतीय किसान की आर्थिक दशा को सुधारना हो तो देश में रैफ़ीसन को ढूँढ निकालो। इसके उपरान्त संयुक्त प्रान्त के श्रीयुत ड्यूपरनैक्स ने इस आन्दोलन का अध्ययन करके पीपुल्स बैंक नामक पुस्तक लिखी। इन सब प्रयत्नों का फल यह हुआ कि भारत सरकार का ध्यान इस ओर आकर्षित हुआ और एक कमेटी इस विषय पर विचार करने के लिये बैठाई गई। इस कमेटी की रिपोर्ट प्रकाशित होने पर उसकी सम्मति के अनुसार १६०३ में प्रथम सहकारिता एक्ट पास होगया। इस कमेटी के सभापति सर एडवर्ड-ला थे जो उस समय भारत सरकार के अर्थ-सचिव थे।

२५ मार्च सन् १६०४ को भारतवर्ष में सहकारिता आन्दोलन का श्रीगणेश होगया। इस एक्ट के अनुसार किसानों, गृह उद्योग-धंधों, तथा नीची श्रेणी के लोगों के लिये साख समितियों के खोलने का आयोजन किया गया। एक्ट संक्षेप में इस प्रकार

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

था। अठारह वर्ष से अधिक के कोई दस मनुष्य सहकारी साख समिति स्थापित कर सकते हैं। सदस्यों को एक ही गांव तथा एक ही स्थान का होना आवश्यक है जिससे वे एक दूसरे के विषय में पूर्ण जानकारी प्राप्त कर सकें। समितियां दो प्रकार की होंगी, ग्रामीण और नगर समितियां। ग्राम्य समिति में ८० प्रति शत सदस्यों का किसान होना, और नगर समितियों में ८० प्रति शत कारीगरों तथा अन्य पेशे वालों का होना आवश्यक है। ग्राम्य समितियों के सदस्यों का दायित्व, अपरिमित होगा, किन्तु नगर समितियों के सदस्यों का दायित्व यदि वे निश्चय करलें, परिमित भी हो सकता है। ग्राम्य समिति का सब लाभ सुरक्षित कोष में जमा करना आवश्यक है। हां, जब सुरक्षित कोष एक निश्चित रक़म से ऊपर पहुँच जावे तो तीन चौथियाई लाभ सदस्यों में बांटा जा सकता है। नगर समितियों में लाभ के बांटने पर कोई रुकावट नहीं लगाई गई, हां यह नियम बनाया गया कि २५ प्रति शत लाभ सुरक्षित कोष में जमा किया जावे। समितियां व्यक्तिगत ज़मानत पर रुपया दे सकती हैं, परन्तु चल सम्पत्ति की ज़मानत पर रुपया नहीं देसकतीं। समितियों का आय व्यय निरीक्षण रजिष्ट्रार के द्वारा भेजे हुए निरीक्षकों के द्वारा होगा। एक्ट ने समितियों को कुछ सुविधाएं भी प्रदान कीं। समितियों के लाभ पर आय-कर नहीं लिया जाता, समितियों को स्टाम्प फ़ीस नहीं देनी पड़ती, और किसी भी सदस्य के व्यक्तिगत ऋण के लिये उसका (समिति में) हिस्सा कुर्क नहीं कराया जा सकता।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सहकारिता एक्ट के पास होते ही सब प्रान्तों में प्रान्तीय सरकारों ने रजिस्ट्रार नियुक्त कर दिये जिन्होंने प्रान्तों में सहकारिता आन्दोलन की देख भाल प्रारम्भ करदी। रजिस्ट्रार आरम्भ में समितियों का संगठन, उनकी देख भाल, तथा उनको रजिस्टर करने का कार्य करता था। किन्तु थोड़े ही समय के उपरान्त रजिस्ट्रार तथा अन्य कार्यकर्त्ताओं को एक्ट के दोषों का अनुभव होने लगा। कई बार सब प्रान्तों के रजिस्ट्रारों के सम्मेलन हुए और उन्होंने एक्ट के संशोधन की आवश्यकता बतलाई। १९०४ के एक्ट के अनुसार साख समितियों के रजिस्टर करने की तो व्यवस्था होगई, किन्तु ग़ैर-साख समितियों, सैन्ट्रल बेंक, बैंकिंग यूनियन, तथा सुपरवायज़िंग यूनियन के रजिस्टर करने की सुविधा नहीं हुई। १९०४ के उपरान्त जब देश में साख समितियों की स्थापना होने लगी, उस समय यह आवश्यक समझा गया कि साख समितियों का निरीक्षण करने के लिये तथा उनको पूँजी देने के लिये सैन्ट्रल बैंक तथा बैंकिंग यूनियन की स्थापना की जावे, क्योंकि साख समितियों के पास सदस्यों की आवश्यकताओं को पूरी करने के लिये यथेष्ट पूँजी नहीं थी। सैन्ट्रल बैंकों की स्थापना कम्पनी एक्ट के अनुसार ही हो सकती थी, न कि सहिकारिता एक्ट के अनुसार। साथ ही इस बात का अनुभव हुआ कि देश को ग़ैर-साख समितियों की भी अत्यन्त आवश्यकता है, उदाहरणार्थ गृह-उद्योग धंधों को प्रोत्साहन देने के लिये, खेतों की पैदावार को उचित मूल्य पर वेचने के लिये,

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

तथा उपभोक्ताओं को उचित मूल्य पर वस्तुएं देने के लिये सहकारी समितियों की स्थापना की आवश्यकता प्रतीत हुई। किन्तु १६०४ के एक्ट में ग़ैर-साख समितियों के संगठन के लिये कोई भी सुविधा न थी। इन सब दोषों को देखते हुये यह आवश्यक समझा गया कि एक नया एक्ट बनाया जावे। अस्तु, १६१२ में दूसरा एक्ट बनाया गया जो अब तक भारतवर्ष में प्रचलित है। केवल बम्बई, (बम्बई एक्ट १६२५) और बर्मा, (बर्मा एक्ट १६२७) प्रान्तों ने अपने प्रान्तीय एक्ट बना लिये हैं। संयुक्त प्रान्त तथा मध्य प्रान्त में भी १६१२ के एक्ट में कुछ संशोधन कर दिये गये हैं। यह परिवर्तन प्रत्येक प्रान्त ने अपनी आवश्यकतानुसार कर लिये हैं। एक्ट के अतिरिक्त प्रत्येक समिति अपने कार्य को सुचारु रूप से चलाने के लिये उपनियम बनाती है।

एक्ट के अनुसार प्रत्येक प्रान्त सहकारिता आन्दोलन की देख भाल के लिये रजिस्ट्रार नियुक्त कर सकता है। रजिस्ट्रार का कार्य केवल समितियों को रजिस्टर करना ही नहीं है, वरन उनका निरीक्षण, तथा उनके आय-व्यय की जांच करना भी है। यदि वास्तव में देखा जावे तो सहकारिता आन्दोलन का सर्वे सर्वा रजिस्ट्रार ही होता है। सहकारिता के एक प्रसिद्ध विद्वान् के शब्दों में वह आन्दोलन का मित्र, पथ-प्रदर्शक, तथा उपदेशक है। रजिस्ट्रार की आधीनता में डिप्टी रजिस्ट्रार से लेकर आय व्यय निरीक्षकों तक बहुत से कर्मचारी होते हैं जो आन्दोलन की देख भाल करते रहते हैं। (धारा ३)

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

रजिस्ट्रार को पंचायत के भी अधिकार प्राप्त हैं, और समितियों के झगड़ों को या तो वह स्वयं सुनकर निर्णय दे देता है, अथवा और किसी को नियुक्त कर देता है। जब कभी कोई समिति टूट जाती है तो रजिस्ट्रार लिक्वीडेटर नियुक्त कर देता है। लिक्वीडेटर उस समिति की अन्तेष्ट क्रिया करता है।

एक्ट के अनुसार कोई भी समिति जो अपने सदस्यों की आर्थिक उन्नति का प्रयत्न, सहकारिता के सिद्धान्तों के अनुसार करने के लिए स्थापित की गई हो रजिस्टर की जा सकती है। बड़े बड़े व्यवसायी अथवा पूँजीपति इस एक्ट की आड़ में अपने धन्धों का संगठन सहकारी समितियों के रूप में न करलें, इस लिये वही सहकारी समितियां रजिस्टर की जा सकतीं हैं जिनके सदस्य किसान, कारीगर, अथवा छोटी हैसियत के आदमी हों। (धारा ४)

समितियों के सदस्यों का दायित्व परिमित तथा अपरिमित भी होसकता है। यदि समिति साख का काम करती है और उस के सदस्य समिति न होकर व्यक्ति हैं, अथवा अधिकांश सदस्य क़िसान हैं, तो ऐसी समिति के सदस्यों का दायित्व अपरिमित होगा। अपरिमित उत्तरदायित्व का अर्थ यह है कि प्रत्येक सदस्य केवल अपना क़र्ज़ा ही चुकाने का ज़िम्मेवार नहीं है वरन् उसको समिति का सारा क़र्ज़ा चुकाना होगा। उदाहरण के लिये यदि मान लिया जावे कि अनन्तपूर नामक गांव में एक सहकारी साख समिति स्थापित कीगई जिसके सदस्यों का दायित्व अपरिमित है;

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

कालान्तर में वह साख समिति दिवालिया होजाती है और उस की लेनी (assets) से देनी (Liabilities) अधिक हो जाती हैं। तो उस समय समिति का कोई भी लेनदार समिति के किसी एक सदस्य से अपना सारा ऋण वसूल कर सकता है। मान लीजिये कि अनन्तपूर साख समिति के और सब सदस्य अत्यन्त निर्धन हैं, केवल दो या तीन सदस्य ऐसे हैं जिनके पास अधिक सम्पत्ति है, तो समिति के सारे ऋण दाता समिति का सारा क़र्ज़ा उन धनी सदस्यों से वसूल कर सकते हैं, और उन सदस्यों को अपनी सारी सम्पत्ति भी बेचकर समिति का क़र्ज़ा चुकाना पड़ेगा।

यदि सहकारी समिति ऐसी है जिसके सदस्य व्यक्ति भी हैं, तथा अन्य समितियां भी हैं; या फिर समिति के सदस्य अधिकतर किसान नहीं हैं, तो उन समितियों के सदस्यों का दायित्व उनके हिस्सों के मूल्य से अधिक नहीं होगा। यदि किसी सदस्य ने किसी परिमित दायित्व वाली समिति में १०) रुपये का हिस्सा लिया है और उसने हिस्से का पूरा मूल्य चुका दिया है तो उसको किसी दशा में भी अधिक कुछ नहीं देना होगा। (धारा ४)

इस आशंका को दूर करने के लिये कि कहीं कोई व्यक्ति-विशेष, सहकारी समिति पर अपना एकाधिपत्य न जमाले यह नियम बना दिया गया है कि परिमित दायित्व वाली समितियों में कोई एक सदस्य अधिक से अधिक, मूल धन के बीस प्रति शत के हिस्से, (यदि कोई समिति चाहे तो उपनियम बनाकर इससे भी कम रक़म निश्चित कर सकती है) या एक हज़ार

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

रुपये के हिस्से (इनमें जो रक़म भी कम हो) ख़रीद सकता है। बम्बई प्रांतीय एक्ट के अनुसार साधारण समितियों के लिये यह रक़म ३ हज़ार रुपये, तथा गृह निर्माण समितियों के लिये दस हज़ार रुपये निश्चित की गई है। किन्तु यह पाबन्दी केवल व्यक्तियों के लिये है, समितियों के लिए कोई भी पाबन्दी नहीं है। सदस्य समितियां चाहे जितने भी मूल्य के हिस्से ख़रीद सकती हैं। (धारा पांच)

जिन समितियों के सदस्य केवल व्यक्ति हैं वे तभी रजिस्टर की जासकती हैं जब कि नीचे लिखी बातें पूरी हों (धारा ६):—

(अ) समिति के कम से कम दस सदस्य हों और उनकी आयु १८ वर्ष से कम न हो।

(ब) यदि समिति साख का काम करना चाहती है तो सदस्यों का एक ही गांव, समीपवर्ती गांवों के समूह, अथवा एक क़स्बे का निवासी होना आवश्यक है। यदि सदस्य एकही स्थान के निवासी नहीं है तो उनका एकही जाति, पेशे, अथवा क़ौम का होना आवश्यक है। किन्तु रजिस्ट्रार को यह अधिकार है कि यदि वह चाहे तो ऐसी समिति को भी रजिस्टर करले जिसमें भिन्न भिन्न जातियों के सदस्य हों।

(क) समिति का ध्येय अपने सदस्यों की आर्थिक स्थिति को सहकारिता के द्वारा सुधारना होना चाहिये।

जिन समितियों के सदस्य अन्य समितियां भीं हैं, और व्यक्ति भी हैं, उनके लिये यह शर्तें लागू नहीं हैं।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

जिन समितियों में केवल व्यक्ति ही सदस्य हों उसकी रजिस्ट्री के लिये कम से कम दस व्यक्तियों को अपने हस्ताक्षर सहित रजिस्ट्रार को प्रार्थना पत्र देना चाहिये। जिन समितियों में व्यक्ति तथा समितियां दोनों ही सदस्य हों उनकी रजिस्ट्री के लिये व्यक्ति तथा समितियों के प्रतिनिधियों के हस्ताक्षर होना आवश्यक है। प्रार्थनापत्र के साथ ही समिति के उपनियमों को भी भेजना चाहिये। (धारा आठ) जब रजिस्ट्रार को यह निश्चय हो जाता है कि सब कार्य नियमानुसार हुआ है तो वह समिति को रजिस्टर कर लेता है, और समिति अपना कार्य आरम्भ कर सकती है। रजिस्ट्रार समिति को एक सर्टिफिकेट देता है जो समिति के रजिस्टर होने का प्रमाण होता है । (धारा ६ और १०) यदि रजिस्ट्रार किसी कारण वश समिति को रजिस्टर करने से इन्कार करता है तो समिति के सदस्य दो मास के अन्दर प्रान्तीय सरकार से इस विषय में अपील कर सकते हैं। (धारा ६)

समितियों के उपनियम समितियों की अन्दरूनी बातों से सम्बन्ध रखते हैं। समिति के सदस्यों से समिति का सम्बन्ध तथा अन्य भीतरी बातों को निर्धारित करने के लिये उपनियम बनाये जाते हैं। किन्तु इन उपनियमों से समिति तथा बाहर वालों के सम्बन्ध निर्धारित नहीं होते। मानलो कि समिति के उपनियमों में उधार पर कोई भी वस्तु बेचने की मनाही हो और यदि किसी बाहर वाले को कोई वस्तु साख पर देदी गई हो,तो इस नियम के होते हुए भी समिति अपना रुपया वसूल कर सकती है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

जो समितियां कि परिमित दायित्व वाली होंगी उनके नाम के आगे लिमिटेड लिखा रहेगा और रजिस्ट्रार किन्हीं दो समितियों को एकही नाम न रखने देगा।

समिति का सदस्य वही व्यक्ति होगा जो कि या तो रजिस्टर किये जाने के समय हस्ताक्षर करने वालों में से हो, अथवा उप-नियमों के द्वारा बनाया गया हो। भारतवर्ष के कुछ प्रांतों में ऐसी समितियां हैं जिनमें हिस्से होते हैं और कहीं कहीं हिस्से नहीं भी होते, केवल प्रवेश फ़ीस होती है।

सहकारी साख समितियों तथा अन्य प्रकार की समितियों में एक मनुष्य की एक ही वोट होती है। सहकारी समितियों में हिस्सों के मूल्य के अनुपात में वोट देने का अधिकार नहीं होता। जब कि कोई समिति किसी दूसरी समिति की सदस्य होती है तो वह अपने किसी प्रतिनिधि को उस समिति के कार्य में भाग लेने के लिये भेजती है। (धारा १३)

भूतपूर्व सदस्य, सदस्य न रहने के दो वर्ष उपरान्त तक सहकारी साख समिति (अपारमित दायित्व) के ऋण के लिये उत्तरदायी होता है। वह केवल उस समय तक के लिये हुए ऋण का ही ज़िम्मेदार होता है जब तक कि वह सदस्य था। (२३)

स्वर्गीय सदस्य की सम्पत्ति, अथवा उनके उत्तराधिकारी, एक वर्ष तक मृत सदस्य के व्यक्तिगत ऋण को चुकाने के लिये उत्तरदायी हैं। किन्तु समिति का सम्मिलित बाहरी ऋण (जिसको अपरि-

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

मित दायित्व वाली समितियों के सदस्यों को चुकाना होता है) मृत सदस्य की सम्पत्ति, अथवा उसके उत्तराधिकारियों से उसी दशा में वसूल किया जासकता है, जब कि साधारण रूप से अदालत में मुक़दमा चलाकर डिगरी करवाई जावे। किन्तु बर्मा तथा बम्बई के प्रान्तीय एक्टों के अनुसार समिति का लिक्टीडेटर मृत सदस्य की रियासत से समिति के सम्मिलित ऋण का वह भाग कि जो सदस्य को देना है वसूल करसकता है। (धारा २४)

समितियों के हिस्से स्वन्त्रता पूर्वक बेचे नहीं जासकते। समिति के हिस्सों के बेचने के विषय में कुछ प्रतिबन्ध एक्ट ने लगाये हैं, और कुछ समितियां (उपनियम बनाकर) लगाती हैं। (धारा १४)

परिमित उत्तरदायित्व वाली समितियों में यह नियम है कि कोई भी बाहरी मनुष्य हिस्से उतने ही मूल्य के ख़रीद सकता है जितने मूल्य से अधिक के हिस्से ख़रीदने का किसी को अधिकार नहीं है। मानलो कि नियमानुसार कोई भी मनुष्य १०० रुपये से अधिक के हिस्से नहीं लेसकता, तो कोई भी बाहरी मनुष्य सदस्यों से १०० रुपये से अधिक के हिस्से नहीं ख़रीद सकेगा।

अपरिमित दायित्व वाली समितियों का कोई सदस्य तब तक अपना हिस्सा दूसरे को नहीं देसकता जब तक उसको हिस्सा लिये हुये एक वर्ष न होगया हो। फिर भी उसे हिस्सा समिति को, अथवा समिति के किसी सदस्य को ही देना होगा। किसी बाहरी आदमी को वह हिस्सा नहीं बेच सकता। (धारा १४)

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

रजिस्टर्ड समितियों को अपना आय व्यय रजिस्ट्रार द्वारा निश्चित किये हुये ढंगे पर रखना होता है। रजिस्ट्रार द्वारा मनोनीत किया हुआ आय--व्यय निरीक्षक आय-व्यय निरीक्षण करता है। (धारा १७)

सहकारी समितियों को निम्न लिखित विशेष सुविधायें प्राप्त हैं:- सहकारी समितियों को अपना रुपया वसूल करने की कुछ सुविधायें प्रदान की गई हैं। यदि समिति ने किसी वर्तमान सदस्य अथया भूतपूर्व सदस्य का बीज अथवा खाद उधार दिया है, अथवा बीज और खाद मोल लेने के लिये रुपया उधार दिया है, तो समिति को उस रुपये अथवा खाद और बीज के द्वारा उत्पन्न की हुई फ़सल से अपना रुपया वसूल करने का प्रथम अधिकार होगा। यदि वह सदस्य और किसी का भी क़र्ज़दार है, तो वह लेनदार उस फ़सल को,जो कि समिति के बीज या खाद से पैदा की गई है कुर्क़ नहीं करवा सकता। इसी प्रकार यदि समिति ने सदस्यों को बैल, चारा, खेती बारी तथा उद्योग धन्धों में काम आने वाले यंत्र, और उद्योग-धंधों के लिये कच्चा माल उधार दिया है, अथवा इन वस्तुओं को खरीदने के लिये रुपया उधार दिया है, तो उन वस्तुओं पर,तथा उस कच्चे माल के द्वारा तैयार किये हुये पक्के माल पर, समिति का प्रथम अधिकार होगा। किन्तु कलकत्ता हाईकोर्ट ने एक मुक़दमे में यह रूलिंग दे दी कि जब तक कि समिति अदालत से डिगरी न कराले तब तक वह और लेनदारों को डिगरी कराने से नहीं रोक सकती। इस

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

रूलिंग के कारण सहकारिता आन्दोलन में कार्य करने वालों को यह अनुभव होने लगा है कि एक्ट में इस आशय का सुधार होना चाहिये, बम्बई प्रान्तीय एक्ट में इस आशय का संशोधन कर दिया गया है। बम्बई प्रान्त में समिति का केवल ऊपर लिखी वस्तुओं के लिये,दिये हुए ऋण पर ही प्रथम अधिकार नहीं होता, वरन सब प्रकार की चीजों के लिये दिये हुए ऋण पर अधिकार होता है। किन्तु यह प्रथम अधिकार सरकारी मालगुज़ारी, ज़मींदार की लगान, तथा किसी ऐसे लेनदार के अधिकार को नष्ट नहीं करता जिसने यह न जानते हुए कि इस वस्तु पर समिति का अधिकार है उसको ख़रीद लिया हो। (धारा १६)

समिति के सदस्य का हिस्सा कोई भी लेनदार अपने ऋण के लिये कुर्क़ नहीं करवा सकता। किसी भी वर्तमान अथवा भूतपूर्व सदस्य के जमा किये हुए रुपये तथा उसके लाभ के हिस्से को ऋण के बदले में ले लेने का समिति को अधिकार है। बाहरी लेनदार कुर्की कराकर इस रुपये को नहीं लेसकता। (धारा २०-२१)।

किसी सदस्य के मरने पर अपरिमित दायित्व वाली समिति को यह अधिकार होगा कि वह चाहे तो मृत सदस्य के वारिस को हिस्सा दे दे अथवा उसका मूल्य चुका दे। किन्तु परिमित दायित्व वाली समिति को मृत सदस्य के उत्तराधिकारी को अवश्य ही हिस्सा देना होगा। (धारा २२)।

सहकारी समिति के लाभ पर इनकमटैक्स तथा सुपर-टैक्स

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

नहीं लिया जाता, और न सदस्यों के लाभ पर टैक्स लिया जाता है।

सहकारी समिति केवल अपने सदस्यों को ही कर्ज़ दे सकती है, किन्तु रजिस्ट्रार की आज्ञा लेकर समिति दूसरी समितियों को भी कर्ज़ दे सकती है। बिना रजिस्ट्रार की आज्ञा के अपरिमित दायित्व वाली समिति चल जायदाद (moveable property) की ज़मानत पर कर्ज़ नहीं दे सकती (धारा २९)।

सहकारी समितियां अपने उपनियमों के द्वारा निश्चित रक़म से अधिक ऋण और डिपाज़िट नहीं ले सकतीं। इसी कारण प्रत्येक समिति प्रति वर्ष अपनी साख निर्धारित करती है। सहकारी साख समितियां उन व्यक्तियों का रुपया डिपाज़िट कर सकती हैं जो सदस्य नहीं हैं। (धारा ३०)।

समिति निम्न लिखित स्थानों में अपना धन जमा कर सकती है, अथवा लगा सकती है।

(१) सरकारी सेविंगस बैंक। (२) ट्रस्टी सिक्योरिटी। (३) किसी अन्य सहकारी समिति के हिस्सों में। (४) किसी भी बैंक में जिसमें रुपया जमा करने की अनुमति रजिस्ट्रार ने दे दी हो। (धारा ३२)।

साधारणतया समिति का लाभ तथा उसका जमा किया कोष बांटा नहीं जा सकता, केवल निम्न लिखित दशाओं में वह बांटा जा सकता है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

परिमित दायित्व वाली समितियों में एक चौथियाई लाभ रक्षित कोष (reserve fund) में जमा करने के उपरान्त सदस्यों में बांटा जा सकता है। किन्तु इसके लिये भी रजिस्ट्रार की अनुमति लेनी पड़ती है। यह प्रतिबंध इस कारण लगाया गया है कि कहीं सदस्यों का उद्देश्य केवल अधिकाधिक लाभ प्राप्त करना ही न हो जावे।

अपरिमित दायित्व वाली समितियों में लाभ प्रान्तीय सरकार की आज्ञा से ही बांटा जा सकता है। प्रान्तीय सरकार साधारण आज्ञा (जनरल परमिशन) भी दे सकती है। प्रत्येक प्रान्त ने यह नियम बना दिया है कि प्रत्येक समिति जिसके व्यापार में लाभ होता है लाभ का कुछ अंश रक्षित कोष में रक्खेगी। रक्षित कोष समिति के भंग होजाने पर भी सदस्यों में बांटा नहीं जा सकता।

रक्षित कोष या तो समिति के व्यापार में लगाया जाता है, या रजिस्ट्रार के पास रहता है अथवा रजिस्ट्रार की आज्ञा से और कहीं ज़मा कर दिया जाता है। समिति के भंग हो जाने पर समिति के ऋण को चुका कर जो रुपया बचे, उसका उपयोग समिति के निर्णय के अनुसार होगा। यदि समिति इसका निर्णय न कर सके तो रजिस्ट्रार जिस प्रकार उस धन का उपयोग करना चाहे कर सकता है। कुछ प्रान्तों में यह नियम है कि यदि समिति किसी अन्य सहकारी संस्था की सदस्य हो तो रक्षित कोष का बचा हुआ रुपया उसको दे दिया जावे।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

ऐक्ट के अनुसार प्रत्येक समिति चौथियाई लाभ रक्षित कोष में रखने के उपरान्त लाभ का १० प्रति शत दान तथा सार्वजनिक कार्यों पर व्यय कर सकती है। वे कार्य निम्न लिखित हो सकते हैं:— निर्धनों को सहायता, सार्वजनिक शिक्षा, गांवों तथा उन स्थानों में जहां समितियां हैं। औषधि मुफ्त बटवाने का प्रबंध, तथा अन्य सार्वजनिक हित के कार्य। कोरी धार्मिक पूजा अथवा धार्मिक शिक्षा पर वह रुपया व्यय नहीं किया जा सकता। (धारा ३४)।

यदि उस ज़िले का ज़िलाधीश जिसमें कि समिति हो जांच के लिये प्रार्थना करे, यदि समिति की पंचायत प्रार्थनापत्र भेजकर जांच करवाना चाहे, अथवा समिति के एक तिहाई सदस्य जांच करवाना चाहें, तो रजिस्ट्रार को स्वयं या अपने किसी आधीनस्थ कर्मचारी से अवश्य जांच करवानी होगी। वैसे रजिस्ट्रार को अधिकार है कि वह जब चाहे समिति की जांच कर सकता है। (धारा ३५)।

समिति के किसी भी लेनदार को यह अधिकार है कि वह समिति के हिसाब का, रजिस्ट्रार, अथवा उसके द्वारा नियुक्त किसी कर्मचारी से निरीक्षण करवावे। किन्तु लेनदार को जांच करने का व्यय देना होगा और उतना रुपया उसको पहिले जमा करना पड़ेगा। (धारा ३६)

रजिस्ट्रार निम्न लिखित दशाओं में किसी भी समिति को भंग कर सकता है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

(१) यदि किसी लेनदार की प्रार्थना पर रजिस्ट्रार ने जांच करवाई हो और उससे यह प्रतीत हो कि समिति को भंग कर देना चाहिये, तो वह भंग कर सकता है।

(२) यदि समिति के तीन चौथियाई सदस्य समिति को भंग करदेने की प्रार्थना करें तो समिति भंग होजाती है। भंग करने की आज्ञा के विरुद्ध कोई भी सदस्य प्रान्तीय सरकार से प्रार्थना कर सकता है। किन्तु भंग होने के दो मास के उपरान्त अपील नहीं सुनी जाती। (धारा ३६)।

(३) यदि समिति के सदस्यों की संख्या १० से कम होजावे तो समिति स्वतः ही भंग होजाती है। (धारा ४०)

समिति के भंग होजाने के उपरांत वे सब सुविधायें जो कि समिति को प्रदान की गई हैं नहीं रहतीं। जब समिति भंग हो जाती है तब रजिस्ट्रार एक लिक्टीडेटर नियुक्त करता है जो उसका शेष कार्य करता है। लिक्टीडेटर का यह कर्त्तव्य होता है कि वह समिति की सम्पत्ति तथा देनी (Liabilities) का हिसाब बनावे, जिन लोगों पर समिति का रुपया बाक़ी है उनसे वसूल करे, जिनकी समिति ऋणी है उनका ऋण चुकावे, तथा सदस्यों के दायित्व को निश्चय करे, और उनसे रुपया वसूल करे। (धारा ४१ और ४२)।

इंडिया एक्ट ने प्रान्तीय सरकारों को यह अधिकार देदिया है कि वे सहकारी समितियों तथा उनके सदस्यों के झगड़ों को निबटाने

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

के लिये कुछ नियम बनादें। सभी प्रांतों ने इस आशय के नियम बना लिये हैं। सहकारी समितियों के लिये यह नियम अत्यन्त आवश्यक हैं। सहकारी समितियों का उद्देश्य निर्धन मनुष्यों की आर्थिक अवस्था का सुधार करना है, उनमें स्वावलम्बन का भाव जागृत करना, तथा उन्हें मितव्ययिता का पाठ पढ़ाना है। यह उद्देश्य तब तक कभी पूरा नहीं हो सकता जब तक कि यह लोग मुक़दमेबाज़ी में व्यय करते रहेंगे। रजिस्ट्रार निम्न-लिखित झगड़ों का निबटारा कर सकता है।

(१) जिससे समिति के व्यापार का सम्बन्ध है।

(२) जिसमें सदस्यों का आपस में किसी बात पर झगड़ा हो भूतपूर्व सदस्यों में कोई झगड़ा हो, अथवा समिति के पंचों में कोई झगड़ा हो। यदि सदस्य, भूतपूर्व सदस्य,होने वाले सदस्य पंचायत तथा समिति के कर्मचारियों के अतिरिक्त और किन्हीं में झगड़ा हो, तो रजिस्ट्रार अथवा उसके द्वारा नियुक्त मनुष्य तय नहीं कर सकते। उसके लिये साधारण अदालतों में जाना होगा।

रजिस्ट्रार या तो स्वयं इन झगड़ों को तय कर सकता है अथवा एक पंच या तीन पंच नियुक्ति कर सकता है जो झगड़ा तय कर दें।

प्रत्येक पेशी के लिये वादियों को उचित नोटिस दिया जाता

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

है। रजिस्ट्रार अथवा पंचों को शपथ लेने, तथा वादियों और गवाहों को उपस्थिति होने के लिये आज्ञा देने का, तथा काग़ज़ों को मंगवाने का अधिकार है। यदि एक वादी उपस्थिति नहीं होता तो उसकी अनुपस्थिति में फैसला किया जा सकता है। गवाही के लिये गवाह के उपस्थित न होने पर उसके विरुद्ध कार्यवाही की जा सकती है। रजिस्ट्रार तथा पंच ऐवीडैन्स ऐक्ट के नियमों को मानने के लिये बाध्य नहीं हैं।

यद्यपि रजिस्ट्रार तथा पंचों पर कानूनी बंधन लागू नहीं हैं फिर भी उनको यह प्रयत्न करना चाहिये कि वे दोनों वादियों एक को दूसरे के सामने भली भांति सुनें। प्राइवेट रूप से जो कुछ भी झगड़े के विषय में ज्ञात हुआ हो उसका उपयोग नहीं करना चाहिये। रजिस्ट्रार को तथा पंचों को यह भी अधिकार है कि केवल कानून को ही न देखें वरन् वस्तु परिस्थिति को भी देखें। फ़ैसला लिखित होना चाहिये उस पर स्टैम्प नहीं होता। वकीलों का इन मुक़दमों में आज्ञा मिलने पर ही आना हो सकता है। बम्बई में वकील इन मुक़दमों में किसी दशा में भी नहीं आ सकते।

यदि रजिस्ट्रार ने कोई पंच नियुक्त किया हो तो उसके फ़ैसले के विरुद्ध अपील रजिस्ट्रार से अपील की जा सकती है किन्तु रजिस्ट्रार के फ़ैसले के विरुद्ध अपील नहीं होती। बम्बई में रजिस्ट्रार के फ़ैसले के विरुद्ध अपील प्रान्तीय सरकार से हो

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सकती है। रजिस्ट्रार के फैसले ठीक उसी तरह लागू होते हैं जिस तरह कि अदालत के। (धारा ४३ उपधारा यल)

रजिस्ट्रार के फ़ैसले के विरुद्ध केवल दो अवस्थाओं में प्रान्तीय सरकार से अपील की जा सकती है। (१) जब रजिस्ट्रार किसी समिति को रजिस्टर करने से इनकार करे। (२) जब रजिस्ट्रार किसी समिति को भंग करदे। आज्ञा से दो महीने तक अपील हो सकती है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

पांचवा परिच्छेद

कृषि सहकारी साख समितियां

१६०४ में जब सहकारिता आन्दोलन का श्री गणेश किया गया तो केवल यह लक्ष्य था कि ग्रामीण जनता की सम्मिलित साख का उपयोग करके ग्रामीण जनता के लिये साख की समस्या हल करदी जावे। अन्य धंधों की भांति खेती बारी में भी पूँजी उधार लेने की आवश्यकता पड़ती है। भारतीय कृषक की निर्धनता, उसका अशिक्षित होना, तथा महाजन का भयंकर ऋण उसको महाजन का क्रीत दास बना देता है। इसी कारण भारत सरकार ने सहकारी साख समितियों की स्थापना करवाई।

सहकारी कृषि साख समिति के सदस्य वे ही हो सकते हैं, जो खेती-बारी में लगे हों तथा एक ही गांव अथवा समीपवर्ती गांवों में रहते हों। प्रत्येक गांव का निवासी एक दूसरे की आर्थिक स्थिति से भली भांति परिचित होता है तथा एक दूसरे के चरित्र के विषय में भी जानकारी रखता है। रैफ़ीसन सहकारी साख समितियां अपरिमित दायित्व वाली होती हैं इस कारण यह नितान्त आवश्यक है कि सदस्य एक दूसरे के चरित्र तथा आर्थिक स्थिति से भलो भांति परिचित हों। यदि सदस्य एक दूसरे के चरित्र तथा आर्थिक स्थिति की भली भांति न जानते हों तथा एक दूसरे में विश्वास न करते हों तो वे अपरिमित दायित्व कभी स्वीकार न करेंगे। अपरिमित दायित्व के सिद्धान्त अनुसार

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

प्रत्येक सदस्य समिति के ऋण को सामूहिक तथा व्यक्तिगत रूप से चुकाने के लिये बाध्य है।

यही कारण है कि कोई नवीन सदस्य तभी समिति में लिया जा सकता है जब कि और सब सदस्य उसको सदस्य बनाने के पक्ष में हों। सहकारी साख समिति का सिद्धान्त यह है कि प्रत्येक सदस्य दूसरे सदस्य के कार्यों का उत्तरदायी बन जाता है, इस कारण सर्व सम्मिति से ही किसी नवीन सदस्य को चुना जाता है। अधिकतर एक गांव में एक ही साख समिति स्थापित की जाती है, किन्तु यदि गांव बहुत बड़ा हो जिसके कारण एक समिति सब वर्गों के लिये उपयोगी न हो सके तो एक से अधिक समितियां भी स्थापित की जा सकती हैं। भिन्न भिन्न जातियों, तथा भिन्न भिन्न धर्मावलम्बियों को पृथक समितियां स्थापित की जा सकती हैं। किन्तु सहकारिता आन्दोलन में कार्य करने वाले सरकारी तथा ग़ैर-सरकारी कार्यकर्त्ता इस प्रकार की समितियों को प्रोत्साहन नहीं देते। सैन्ट्रल बैंकिंग इनकायरी कमेटी की सम्मति में किसी विशेष जाति, पेशे, तथा धर्मावलम्बियों की साख समितियां स्थापित करना उचित नहीं है। गांव में जितने भी मनुष्य हों उन सब की एक ही समिति होना आवश्यक है। ऐसी साख समिति गांव के प्रत्येक मनुष्य को एक आर्थिक सूत्र में बांध कर उनमें प्रेम-भाव उत्पन्न करती है।

समिति का प्रबंध करने का अधिकार साधारण-सभा तथा प्रबंध कारिणी सभा अर्थात पंचायत को होता है। साधारण-सभा

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सब महत्व पूर्ण प्रश्नों पर अपना स्पष्ट मत दे देती है और पंचायत साधारण सभा की आज्ञाओं का पालन करती है। वस्तुतः साधारण सभा केवल नीति निर्धारित करती है, और पंचायत सारा कार्य करती है।

प्रबंध कारिणी समिति निम्न लिखित कार्य करती है :—

(१) वह सदस्यों को हिस्से देती है तथा उनको समिति का सदस्य बनाती है।

(२) ग्राम से डिपाज़िट लेनेका प्रयत्न करती है, तथा सैन्ट्रल बैंक से ऋण लेने का प्रबन्ध करती है। पंचायत का सबसे महत्व पूर्ण कार्य यह है कि वह सदस्यों तथा अन्य ग्राम निवासियों को समिति में रुपया जमा कमा करने के लिये प्रोत्साहित करती है।

(३) जब कभी आवश्यकता हो तो साधारण सभा का आयोजन करती है।

(४) पंचायत यह भी निश्चय करती है कि किन सदस्यों को कितने समय के लिए उधार दिया जावे। साथ ही पंचायत उस अवधि के अन्त में ऋण के रुपये को वसूल करती है।

(५) पंचायत समिति के आय व्यय का हिसाब रखती है।

(६) समिति सम्बन्धी कार्यों में रजिस्ट्रार से लिखा पढ़ी करती है।

(७) जो सदस्य कि सम्मिलित रूप से आवश्यक वस्तुओं

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

को ख़रीदना चाहते हैं तथा खेत की पैदावार को बेचना चाहते हैं उनके लिये दलाल का काम करती है।

सदस्यों में मितव्ययिता का प्रचार करती है तथा उन्हें अपनी बचत को जमा करने के लिये उत्साहित करती है।

पंचायत, सरपंच तथा मंत्री का निर्वाचन करती है। सरपंच समिति के सारे कार्य की देख भाल रखता है तथा मन्त्री समिति का हिसाब रखता है।

समिति प्रवेश फ़ीस, हिस्सों का मूल्य, डिपाज़िट, तथा ऋण के द्वारा कार्यशील पूँजी उगाहती है। समिति का रक्षित कोष भी समिति की कार्यशील पूँजी को बढ़ता है। प्रवेश फ़ीस नाम मात्र की होती है और प्रारम्भिक व्यय के लिये लीजाती है, जो समिति की स्थापना करते समय करना पड़ता है। कुछ प्रान्तों में सदस्यों को हिस्से ख़रीदने पड़ते हैं और कुछ प्रांतों में हिस्से नहीं होते। पंजाब, संयुक्त प्रांत, और बर्मा के अधिकतर भाग में, तथा मदरास में, समितियां हिस्से वाली होती हैं। अन्य प्रांतों में हिस्से तथा ग़ैर हिस्से वाली समितियां दोनों ही दृष्टिगोचर होती हैं।

भारतवर्ष में सहकारी साख समितियां हिस्से वाली होनी चाहिये अथवा ग़ैर हिस्से वाली यह विचारणीय विषय है। कुछ विद्वानों का मत है कि समितियां हिस्से वाली होनी चाहिये क्योंकि हिस्सों को बेचकर थोड़ी कार्यशील पूँजी इकट्ठी करली जाती है। समिति अपनी पूँजी सदस्यों को ऋण स्वरूप देकर

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

उस पर लाभ उठाती है और अप्रत्यक्ष रूप से रक्षित कोष की वृद्धि होती है। सदस्य समिति के कार्यों में विशेष चाव से भाग लेने लगते हैं क्योंकि वे उसे अपनी वस्तु समझते हैं; यह सब ठीक है, किन्तु भारतवर्ष में गांवों में रहने वाले इतने निर्धन हैं कि वे किसी प्रकार भी हिस्से का मूल्य नहीं चुका सकते, ऐसी अवस्था में यदि हिस्से वाली समितियां स्थापित की जावेंगी तो वे ईमानदार तथा परिश्रमी किसान जो कि निर्धन हैं सदस्य न बन सकेंगे। लेखक के विचार से ग़ैर हिस्से वाली समितियां ही उपयुक्त होंगी। यदि सदस्यों को सहकारिता के सिद्धान्तों की भली भांति शिक्षा दीजावे तो वे समिति के कार्य में अधिक भाग लेने लगेंगे और उन में मितव्ययिता के भाव जागृत हो सकेंगे; सदस्यों को सदस्य बनाते समय यह भी बतलाना चाहिये कि साख समिति केवल ऋण देने के ही लिये नहीं है, सदस्यों को उसमें रुपया भी जमा करना चाहिये।

साख समिति का कोई सदस्य एक निश्चित रक़म से अधिक के हिस्से नहीं ख़रीद सकता। प्रत्येक सदस्य को केवल एक वोट देने का अधिकार होता है। प्रवेश फ़ीस तथा हिस्सों के मूल्य से समिति के पास नाम मात्र को पूँजी इकट्ठी होती है इस कारण समितियां अधिकतर ऋण और डिपाज़िट के द्वारा अपना काम चलाया करती हैं। जितनी ही अधिक कोई समिति डिपाज़िट आकर्षित करे उतनी ही उसकी सफलता समझी जानी चाहिये क्यों-कि डिपाज़िट तभी अधिक जमा होंगीं जब कि जनता को समिति

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

का भरोसा होगा, और उसकी आर्थिक स्थिति में विश्वास होगा। साख समितियों का आदर्श यह होना चाहिये कि वे अपनी आवश्यकता के लिये पूँजी का स्वयं ही प्रबन्ध करें। जब तक कि साख समितियां डिपाज़िट आकर्षित करके अपनी आवश्यकता के अनुसार पूँजी जमा नहीं कर सकतीं तब तक उन को निर्बल ही समझना चाहिये। जमा करने से ग्रामीण जनता तथा सदस्यों में मितव्ययिता का भाव जागृत होता है। भारतवर्ष में अभी तक बंबई प्रान्त को छोड़ और किसी प्रांत में समितियों ने डिपाज़िट आकर्षित नहीं कर पाई हैं। साख समितियां ग़ैर सदस्यों से भी डिपाज़िट लेती हैं, किन्तु सैन्ट्रल बैंकिंग इनक्वायरी कमेटी का यह मत है कि सहकारी साख समितियों को अधिक सूद देकर डिपाज़िट आकर्षित न करना चाहिये। क्योंकि यदि समितियां डिपाज़िट पर अधिक सूद देंगी तो सूद की दर गांवों में न घट सकेगी जिसकी अत्यन्त आवश्यकता है। जब तक कि सैन्ट्रल बैंक सुसंगठित न हों तब तक वे साख समितियों की पूँजी के सन्तुलन केन्द्र नहीं बन सकते। और जब तक कि सैन्ट्रल बैंक समितियों की आवश्यकता से अधिक पूँजी का उचित उपयोग करने के योग्य न हो जावें, तथा आवश्यकता पड़ने पर समितियों को शीघ्र ही पूँजी देने की योग्यता प्राप्त न करलें, तब तक ग़ैर सदस्यों से डिपाज़िट लेना जोखिम का काम है। क्योंकि तनिक भी सन्देह हो जाने पर ग़ैर सदस्य अपना रुपया लेने को दौड़ पड़ेंगे।

समिति के पंचों को कोई वेतन नहीं दिया जाता केवल मंत्री को

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

थोड़ासा वेतन दिया जाता है। मंत्री यदि उसी गांव का रहने वाला हो तो अच्छा है क्योंकि वह सदस्यों से भली भांति परिचित होगा परन्तु गांव के पटवारी को किसी भी अवस्था में मन्त्री न बनाना चाहिये, क्योंकि पटवारी का गांव में बहुत प्रभाव होता है इस कारण सम्भव है कि वह पंचायत के अनुशासन में न रहे और सदस्य उससे दबते रहें। यदि गांवकी समितिमें कोई शिक्षित सदस्य हो तो उसको मन्त्री बनाया जाना चाहिये परन्तु यदि कोई सदस्य न मिले तो गांव के शिक्षक को मन्त्री बनाना चाहिये।

यह तो पूर्व ही कहा जा चुका है कि सहकारी साख समितियों की स्थापना लाभ की दृष्टि से नहीं की जाती, इसी कारण अपरिमित उत्तर दायित्व वाली समितियों में तो लाभ बांटा ही नहीं जाता, और यदि बांटा भी जाताहै तो प्रान्तीय सरकार की आज्ञा लेकर। परिमित दायित्व वाली समितियां लाभ बांट तो सकतीं हैं परन्तु उनको भी यथेष्ट धन रक्षित कोष में जमा करना पड़ता है।

सहकारी साख समितियों का प्रबंध व्यय बहुत कम होने के कारण तथा लाभ न बांटने के कारण रक्षित कोष यथेष्ट जमा हो जाता है। प्रत्येक साख समिति के लिये रक्षित कोष अत्यन्त आवश्यक है। जब तक कि समिति के पास यथेष्ट कोष न हो जावे तब तक वह सबल नहीं बन सकती। रक्षित कोष किसी भी अवस्था में बांटा नहीं जासकता; उसका उपयोग समिति के कार्य में हानि होने पर उसे पूरा करने में होता है, यदि किसी देनदार से रुपया वसूल नहीं हुआ अथवा किसी वस्तु के बेचने

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

में हानि हो गई तो रक्षित कोष से उसको पूरा किया जाता है। यदि समिति भंग हो जावे तो भी या तो रक्षित कोष किसी अन्य सहकारी समिति को दे दिया जावेगा, या रजिस्ट्रार की अनुमति से किसी सार्वजनिक कार्य में व्यय कर दिया जावेगा। साधारणतया परिमित दायित्व वाली समितियां अपने रक्षित कोष को अपने व्यापार में न लगाकर बाहर किसी बैंक में रखती हैं किन्तु ऐसा वे ही समितियां करती हैं जो कि ग़ैर सदस्यों का रुपया भी जमा करती हैं। किन्तु अपरिमित दायित्व वाली समितियां रक्षित कोष के धन को अपने निजी कार्य में लगाती हैं; बाहर जमा नहीं करतीं।

यह तो पूर्व ही कहा जाचुका है कि कृषि साख सहकारी समितियां अपरिमित दायित्व वाली होती हैं और नगर साख समितियां, तथा जिन समितियों के अधिकतर सदस्य किसान नहीं होते वे चाहें परिमित चाहे अपरिमित दायित्व स्वीकार कर सकती हैं। किन्तु जिन सहकारी समितियों की सदस्य अन्य समितियां हों उनका दायित्व परिमित ही होगा। ऐसी समितियां प्रान्तीय सरकार से आज्ञा लेकर ही अपरिमित दायित्व वाली बन सकती हैं। भारतवर्ष में सब सैन्ट्रल बैंक, बैंकिंग यूनियन, तथा अधिकतर नगर सहकारी, तथा वैसी साख समितियां जिनमें, अधिकतर किसान सदस्य नहीं होते, परिमित दायित्व वाली होती हैं, तथा किसानों की साख समितियां अपरिमित दायित्व वाली होती हैं।

यदि किसी समिति को हानि होजावे तो सर्व प्रथम उस

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

सदस्य से रुपया वसूल किया जावेगा जिसने कि ऋण लिया है। यदि उससे वसूल न हुआ तो ज़मानत देने वाले से वसूल किया जावेगा। यदि उससे भी वसूल न हुआ तो रक्षित कोष से हानि भरदी जावेगी। यदि उससे भी हानि पूरी न हुई तो समिति की पूँजी का उपयाग किया जावेगा, यदि समिति की पूँजी देकर भी हानि पूरी न होसके तो समिति के सदस्यों को समिति के देनदारों को रुपया चुकाना होगा। प्रत्येक सदस्य को कितना रुपया देना होगा, लिक्टीडेटर इसका हिसाब लगाकर उनसे उतना रुपया वसूल कर लेगा। व्यवहारिक दृष्टि से अपरिमित दायित्व का यही अर्थ निकलता है, किन्तु सिद्धांतरूप से प्रत्येक सदस्य व्यक्तिगत रूप से सारे ऋण को चुकाने को वाध्य है। किन्तु यह उसी दशा में हो सकता है कि जब और सदस्यों से रुपया वसूल न होसके।

साधारण सभा अपनी मीटिंग में समिति की साख निर्धारित करती है उससे अधिक पंचायत ऋण नहीं ले सकती।

समिति की साख को निर्धारित करने के लिये यह आवश्यक है कि समिति के सदस्यों की सम्पत्ति का हिसाब लगाया जावे। भारतवर्ष के भिन्न भिन्न प्रान्तों में समिति के सब सदस्यों की सम्पत्ति की एक चौथियाई से आधी तक साख निर्धारित की जाती है। समिति एक हैसियत रजिस्टर रखती है जिसमें प्रत्येक सदस्य की हैसियत का लेखा रहता है। हैसियत रजिस्टर का प्रति वर्ष संशोधन होता है और प्रत्येक सदस्य की हैसियत का यथार्थ लेखा रखने का प्रयत्न किया जाता है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

इसके अतिरिक्त यह भी निश्चित कर दिया जाता है कि प्रत्येक सदस्य अधिक से अधिक कितना उधार ले सकता है । किसी अवस्था में भी सदस्य की सम्पत्ति का ५० प्रति शत से अधिक उधार नहीं दिया जासकता। रुपया उधार देते समय पंचायत क़र्ज़ा लेने का उद्देश्य तथा सदस्य की चुकाने की शक्ति का अनुमान लगा कर ही क़र्ज़ा देना निश्चय करती है।

सहकारिता आन्दोलन का सिद्धांत है कि ऋण अनुत्पादक कार्यों के लिये अथवा व्यर्थ--कार्यों के लिये न दिया जावे। किन्तु भारतवर्ष में सहकारी साख समितियां विवाह, श्राद्ध, तथा अन्य सामाजिक कार्यों के लिये भी उधार देती हैं, पंचायत का यह मुख्य कर्तव्य है कि वह इस बात की जांच करे कि सदस्य क़र्ज़ा किस कार्य के लिये लेरहा है। साथ ही पंचायत को इस बात का भी पता लगाना चाहिये कि सदस्य ने उसी कार्य में धन व्यय किया है कि जिसके लिये कर्ज़ा दिया गया था, अथवा किसी अन्य कार्य में। यदि सदस्य ने किसी काम में रुपया लगाया है तो पंचायत को रुपया वापिस ले लेना चाहिये।

सहकारी साख समिति के सदस्यों को एक दूसरे पर दृष्टि रखनी चाहिये कि वे धन का दुरुपयोग तो नहीं करते, समय पर कर्ज़ा चुकाते हैं, अथवा किश्तों को टालने का प्रयत्न करते हैं।

पंचायत ऋण देते समय ही सदस्य की स्थिति को दृष्टि में रखते हुए किश्तें बांध देती है क्यों कि सदस्यों को किश्तों के

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

द्वारा ऋण चुकाने में सुविधा होती है। पंचायत का यह मुख्य कर्तव्य है कि वह देखे कि सदस्य समय पर किश्तें चुकाता है। किन्तु किसी अनिवार्य कारण वश यदि वह किश्त न चुका सके (जैसे फ़सल नष्ट हो जाना) तो किश्त की मियाद बढ़ा देना चाहिये और सदस्य पर दबाव नहीं डालना चाहिये।

अधिकतर नीचे लिखे कार्यों के लिये समितियां ऋण देती हैं।

(१) खेती-बारी के लिये,मालगुज़ारी तथा लगान देने के लिये।
(२) भूमि का सुधार करने के लिये।
(३) पुराने ऋण को चुकाने के लिये।
(४) गृहस्थी के कार्यों के लिये।
(५) व्यापार के लिये।
(६) भूमि ख़रीदने के लिये।

जो आंकड़े सहकारी विभाग से हम को प्राप्त होते हैं उन से यह कहना अत्यन्त कठिन है कि किन कार्यों के लिये कितना रुपया लिया जाता है। सदस्य प्रार्थना पत्र में तो खेती बारी के लिये रुपया लेने की बात लिखता है और उस रुपये को व्यय करता है किसी सामाजिक कार्य पर। समितियों ने अभी तक इस ओर विशेष ध्यान ही नहीं दिया है।

समय की दृष्टि से दो प्रकार के ऋण होते हैं, अर्थात् थोड़े समय के लिये तथा अधिक समय के लिये। थोड़े समय के लिये

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

जो ऋण लिया जाता है, उसका उपयोग खेती-बारी के धंधे में (अर्थात् बीज, खाद, बैल, हल आदि वस्तुओं के ख़रीदने में) तथा अन्य आवश्यक ख़र्चों में होता है। अधिक समय के लिये लिया हुआ ऋण, भूमि ख़रीदने मूल्यवान यन्त्र लेने, तथा पुराना कर्ज़ा चुकाने के काम आता है। प्रान्तीय बैंकिंग इन-कायरी कमेटियों की यह सम्मति है कि कृषि सहकारी साख समितियां अपने सदस्यों को तीन वर्षों से अधिक ऋण नहीं दे सकतीं। लम्बे समय के लिये ऋण देने का कार्य सहकारी भूमि बंधक बैंक ही कर सकते हैं। सहकारिता आन्दोलन में कार्य करने वालों की भी यही धारणा है कि सहकारी कृषि साख समितियां अधिक समय के लिये ऋण देने का कार्य नहीं कर सकतीं।

सहकारी कृषि साख समिति की सफलता के लिये यह अत्यन्त आवश्यक है कि सदस्य सहकारिता के सिद्धान्तों को समझें। अस्तु समिति का संगठन करते समय उन्हें सहकारिता के सिद्धान्तों की शिक्षा देनी चाहिये। भारतवर्ष में अभी तक ग्रामीण सदस्य यह समझता है कि सहकारी साख समितियां सरकार द्वारा खोले हुये बैंक हैं जो हम लोगों को ऋण देते हैं। वे कभी स्वप्न में भी यह नहीं सोचते कि यह हमारी ही समिति है और हम अपरमित दायित्व के द्वारा उचित सूद पर पूँजी पा सकते हैं। जब तक स्वावलंबन का यह भाव सदस्यों में जागृत नहीं होता तब तक सहकारिता आन्दोलन सफल नहीं हो सकता। इस कमी के ही कारण साख आन्दोलन अभी तक सफल नहीं हो सका।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

समितियों का आय व्यय निरीक्षण रजिस्ट्रार की अधीनता में होता है। रजिस्ट्रार या तो सहकारी विभाग के आय-व्यय निरीक्षकों से जांच कराता है और यदि आय-व्यय निरीक्षक का कार्य किसी ग़ैर-सरकारी संस्था को दे दिया गया हो तो रजिस्ट्रार उस संस्था के आडिटरों को लायसैंस देता है तभी वह आय व्यय निरीक्षण का कार्य कर सकते हैं।

आडिटर समिति के आय व्यय की जांच तो करता ही है साथ ही वह इस बात की भी जांच करता है कि कितना रुपया सदस्यों पर उधार है जिसके चुकाने की अवधि समाप्त होगई किन्तु चुकाया नहीं गया। इसके अतिरिक्त वह समिति की लेनी देनी का भी हिसाब देखता है। आय व्यय निरीक्षक का कर्तव्य केवल आय-व्यय देखना ही नहीं है किन्तु उसको यह भी देखना चाहिये कि समिति का कार्य सहकारिता के सिद्धान्तों के अनुसार हो रहा है अथवा नहीं। आय-व्यय निरीक्षक को समिति की आर्थिक स्थिति की पूरी जांच करना चाहिये। उसे देखना चाहिये कि ऋण उचित समय के लिये तथा उचित कार्यों के लिये दिये गये हैं, तथा आवश्यक ज़मानत ली गई है अथवा नहीं। इसके अतिरिक्त उसे यह भी देखना चाहिये कि सदस्य ठीक समय पर ऋण चुकाते हैं कि नहीं। कहीं ऐसा तो नहीं होता कि सदस्य ठीक समय पर न चुकाते हों किन्तु हिसाब में उनका रुपया जमा कर लिया जाता हो और उतना ही ऋण फिर दे दिया जाता हो। कहने का तात्पर्य यह है कि निरीक्षक को पूरी जांच करना चाहिये।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

भारतवर्ष में आय व्यय निरीक्षण का कार्य भली भांति नहीं हो रहा है। सहकारिता आन्दोलन में कार्य करने वालों, तथा सैन्ट्रल बैंकिंग इनक्वायरी कमेटी की यह राय है कि आय व्यय निरीक्षण का कार्य अत्यन्त त्रुटि पूर्ण है।

यद्यपि प्रत्येक प्रान्त में आय व्यय निरीक्षण का कार्य रजिस्ट्रार की देख रेख में होता है परन्तु प्रत्येक प्रान्त में भिन्न भिन्न संस्थायें इस कार्य को कर रही हैं। पंजाब में प्रांतीय सहकारी इंस्टिट्यूट के कर्मचारी तथा बिहार उड़ीसा में प्रान्तीय फ़ैडेरेशन के कर्मचारी रजिस्ट्रार की देख रेख में यह कार्य करते हैं। कुछ प्रान्तों में रजिस्ट्रार के कर्मचारी आय व्यय निरीक्षण का कार्य करते हैं, तथा कुछ स्थानों में समितियों ने आय व्यय-निरीक्षक यूनियन स्थापित की हैं जो इस कार्य को करती हैं।

अप्रैल १९३१ में आल इण्डिया कोआपरेटिव कानफ्रैंस का अधिवेशन हैदराबाद में हुआ था। उस सम्मेलन में समस्त भारत में आय व्यय निरीक्षण की एक ही पद्धति चलाने का निश्चय हुआ और और उसके अनुसार एक योजना भी तैयार की गई।

उस योजना के अनुसार समितियों का निरीक्षण कार्य सैन्ट्रल बैंक, तथा बैंकिंग यूनियन के हाथ में ही रहना चाहिये। आय-व्यय निरीक्षण प्रान्तीय संस्थाओं के हाथ में रहना चाहिये। प्रान्तीय संस्था प्रत्येक ज़िले में ज़िला आडिट यूनियन स्थापित करे उस ज़िले की सहकारी समितियां तथा सैन्ट्रल बैंक उस

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

आडिट यूनियन से सम्बन्धित हों, तथा सब ज़िला यूनियन प्रान्तीय संस्था से सम्बन्धित हों। प्रान्तीय इन्स्टिट्यूट तथा ज़िला आडिट यूनियन के कर्मचारियों की नियुक्ति तथा अनुशासन प्रान्तीय इन्स्टिट्यूट करे।

प्रारम्भिक सहकारी समतियों का आय व्यय निरीक्षण ज़िला आडिट यूनियन के आडिटर करें, और सैन्ट्रल बैंक तथा प्रान्तीय बैंकों का आय व्यय निरीक्षण प्रान्तीय इन्स्टिट्यूट के आडिटर करें।

प्रान्तीय इन्स्टिट्यूट तथा ज़िला आडिट यूनियन के आडिटर वही लोग नियत किये जावेंगे कि जिन्होंने इस कार्य की शिक्षा पाई है और जिनको रजिस्ट्रार ने लायसैंस दे दिया है। यदि कोई आडिटर इस कार्य के योग्य न हो तो रजिस्ट्रार उसका लायसैन्स ज़ब्त करसकता है। इसके अतिरिक्त रजिस्ट्रार आडिट यूनियन तथा प्रान्तीय इन्स्टिट्यूट के कार्य में हस्ताक्षेप नहीं कर सकता।

प्रान्तीय इंस्टिट्यूट नगर बैंक तथा सेंट्रल बैंकों से आडिट फ़ीस वसूल करेगी, किन्तु कृषि सहकारी साख समितियों का आय व्यय निरीक्षण निश्शुल्क होना चाहिये इस कारण प्रान्तीय सरकार प्रान्तीय इन्स्टिट्यूट को आर्थिक सहायता प्रदान करें। अभी तक प्रारम्भिक समितियों से थोड़ी आडिट फ़ीस ली जाती है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

समितियों की देख रेख तथा उनका नियन्त्रण रजिस्ट्रार तथा प्रान्तीय सहकारी संस्था दोनों ही करते हैं।

सहकारी साख समितियां अपने कार्य में सफल हो रहीं हैं अथवा नहीं इसमें कुछ मतभेद हो सकता है किन्तु इसमें संदेह नहीं कि वे अभी बहुत निर्बल हैं और वे वास्तव में सहकारी नहीं हैं। इम्पीरियल बैंक के मैनेजिंग गवर्नर ने सैंट्रल बैंकिंग इन-कांयरी कमेटी के सामने गवाही देते हुए कहा था "इन समितियों में सहकारिता के सिद्धान्तों की नितान्त अवहेलना की जाती है। ऋण ठीक समय पर कभी नहीं चुकाये जाते, आय व्यय निरी-क्षण ठीक नहीं होता, तथा इन समितियों की देख भाल भी उचित रीति से नहीं होती"। इसमें कोई संदेह नहीं कि ऊपर लिखे हुये दोष इन समितियों में अवश्य हैं। इम्पीरियल बैंक के मैनेजिंग गवर्नर का तो यहां तक कहना है कि अधिकतर सहकारी समितियों की आर्थिक दशा अच्छी नहीं है, किन्तु जो लोग इस आन्दोलन को चला रहे हैं उनका कहना है कि यह कथन सत्य नहीं है। शाही कृषि कमीशन की सम्मति है कि आन्दोलन की आर्थिक स्थित अच्छी है, हां समितियों का कार्य दोष पूर्ण है।

सहकारो साख समितियों की संख्या देश के विस्तार तथा जन संख्या को देखते हुए बहुत कम है, किन्तु फिर भी साख समितियों का लाभकारी प्रभाव हमें दृष्टिगोचर होता है। समि-तियों ने क्रमशः बहुत राशि में कार्यशील पूँजी जमा करली है और वह पूँजी उचित सूद पर किसानों को दीजाती है और जहां

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

साख समितियां अधिक संख्या में खुलगई हैं, वहां सूद की दर महाजनों ने भी घटादी है। आशा है कि वहां भविष्य में किसान को साहूकार के चँगुल से बचाया जासकेगा। साधारण किसानों में सहकारिता का ज्ञान बढ़ रहा है। सदस्यों में मितव्ययिता का भाव जागृत होरहा है, तथा उनको व्यापार सम्बन्धी शिक्षा मिल रही है। यदि प्रत्येक गांव में एक सहकारी साख समिति की स्थापना हो जावे और वह सफलता पूर्वक कार्य करने लगे तो ग्रामीण जनता का उद्धार हो सकता है।

भारतवर्ष में कृषि सहकारी समितियों का ही प्रधान्य है। १६३० के जून मास के अन्त में देश में ६४,५०० सहकारी साख समितियां थीं। जिनमें से ७४५०० सहकारी साख समितियां थीं। १६३०-३१ में भारतवर्ष के अन्तरगत सब प्रकार की सहकारी समितियों की संख्या केवल १,०६,१६६ थी।

१६३०-३१ में भिन्न भिन्न समितियों की संख्या इस प्रकार थी-

सैन्ट्रल बैंक, बैंकिंग यूनियन, तथा प्रान्तीय बैंक	६०७
सुपरवायज़िंग तथा गारंटी यूनियन	१२५६
कृषि तथा पशु बीमा समितियां	६३,७७३
ग़ैर कृषि समितियां	१०,५३०

कृषि सहकारी साख समितियों की पूँजी अब थोड़ी नहीं है। ३० जून १६३१ में इनकी कार्यशील पूँजी ३६ करोड़ रुपये के

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri and Sarayu Trust.

लगभग थी और अब इससे अधिक है। ३० जून १६३१ को कृषि सहकारी साख समितियां की कार्यशील पूँजी इस प्रकार थी।

हिस्सों की पूँजी	रु० ४,३६,६०,०००
रक्षित कोष	६,५३,६३,०००
डिपाज़िट	३,२६,३१,०००
ऋण	२१,७३,७०,०००
कुल जोड़	३५,६३,५३,०००

भारतवर्ष में ग्रामीण ऋण की समस्या इतनी भयंकर है कि प्रारम्भ में सहकारी विभाग की दृष्टि केवल साख समितियों पर ही रही और इस समय भी अधिकतर उनकी ओर ही अधिक ध्यान दिया जाता है। किन्तु जो लोग इस आन्दोलन में लगे हुए हैं उनका कहना है कि यही आन्दोलन की निर्बलता है। जब तक कि साख समितियों के अतिरिक्त क्रय-विक्रय समितियां स्थापित करके किसान को सहायता न दीजावेगी तब तक उसकी आर्थिक स्थिति संभल न सकेगी।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE